भारत एवं राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2023-2025

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 8 | अंक 03 | उदयपुर बुधवार 15 फरवरी 2023 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

महाराणा प्रताप के चित्र के परिकल्पनाकार थे मास्टर कुंदनलाल

मेवाड़ राज्य की अव्वल विभूतियों में चित्रकारी की दृष्टि से मास्टर कुन्दनलाल का नाम विशेष विचारणीय है। महाराणा फतहसिंहजी ने उनकी बाल-प्रतिभा को रेखांकित कर उन्हें प्रशिक्षण के लिए जे. जे. स्कूल बम्बई भेजा। यही नहीं, वे यह भी जानते थे कि यदि हमारे यहां के कलाकारों व कारीगरों को उचित संरक्षण एवं मार्गदर्शन प्राप्त हो तो वे विदेशी कलाकारों से भी बढ़त कर सकते हैं। उन्होंने मास्टर कुन्दनलाल को चित्रकारी तथा खाजू उस्ताद को बन्दूक के काम में दक्षता हांसिल करने लन्दन भेजा।

लन्दन से लौटने पर कुन्दनलाल ने अपनी कला को कीर्ति के शिखर तक पहुंचा दिया। महाराणा के गोल महल में कमरा नम्बर 5, 6 एवं 9 में उन्होंने जो चित्रकारी की वह आज भी उतनी ही दमक लिये है। कमरा नम्बर 5 में तो चीनी के टुकड़ों से उनके बनाये चित्र भी उनकी प्रतिमा-कल्पना के कमाल उदाहरण हैं। महाराणा प्रताप का चित्र भी सर्वप्रथम कुन्दनलाल ने ही बनाया।

रवि वर्मा ने उन्हीं के चित्र की अनुकृति को स्पर्श देकर बड़ाई दी। यह सब तो हुआ मगर जातपांत का अपना रंग-ढंग ही निराला होता है। कुन्दनलाल चाहे कितने ही कुन्दन बन गये हों मगर उनकी ही जाति के नियम के विरूद्ध जब

वे विदेश चले गये तो जातवालों ने उन्हें अपनी जाति से बाहर कर दिया तो वे मृत्यु पर्यन्त बाहर ही रहे।

उनके वयोवृद्ध शिष्य नारायणलालजी भारद्वाज (93) ने 10 अक्टूबर 1979 को मुझे बताया कि वे बड़े मस्तमौला और इश्क मिजाजी थे। स्वभाव से अड़ियल और गुस्सैल थे। कभी नहाते नहीं थे। संवत् 1912 में उनका जन्म हुआ। 44 वर्ष की उम्र में वे विदेश गये और 60 वर्ष की आयु में उन्होंने शरीर छोड़ा।

नाथद्वारा में उन्होंने कला भवन की स्थापना की और दिल्लीवाली धर्मशाला बनाई। उन्होंने अपने नाम से कुन्दनशाही डिजाईन चलाई जो मकानों में गोखड़ों के नीचे तथा बारनों की छत में देखी जा सकती है। समोर बाग में दरबार के आर्ट स्कूल के वे प्रिंसिपल भी रहे। अंग्रेजी पुस्तकों की उनकी बड़ी समृद्ध लाइब्रेरी थी।

जाति वालों ने तो उन्हें जात से बाहर किया ही पर एक घटना ऐसी भी घटी कि स्वयं महाराणा फतहसिंहजी ने उन्हें उदयपुर से निष्कासित कर दिया। हुआ यह कि किसी के बहकावे में आकर कुन्दनलाल ने महाराणा फतहसिंहजी का एक ऐसा चित्र बना दिया जिसमें उन्हें अत्यन्त वृद्ध तथा आंखों से क्षीण दिखाया। यह चित्र किसी ने रेजीडेन्ट के पास भेज लिख दिया कि महाराणा राजकाज की दृष्टि से अक्षम हो गये हैं।

इस पर रेजीडेन्ट ने अपना एक प्रतिनिधि भेजा। महाराणा उसे अपने साथ जयसमन्द ले गये और शिकार के लिए 20 किलोमीटर पहाड़ी जंगलों में चक्कर लगवाया। इससे वह थककर चकनाचूर हो गया। यही नहीं वहां बने मचान पर शिकार के लिए हाका दिलवाकर शेर को आड़े लिया। रेजीडेन्ट को उस शेर पर गोली दागने को कहा पर उससे शिकार नहीं हुआ।

इस पर दूसरी बार फिर हाका हुआ। शेर आया तब महाराणा बोले, हालांकि मुझे दिखता कम है, फिर भी कोशिश करता हूं। यह कहते ही उन्होंने गोली से शेर को चारों खाने चित्त कर दिया। यही नहीं, अन्तिम दिन जब रेजीडेन्ट को विदा दी गई तो उससे इस ढंग से हाथ मिलाया कि उसके हाथ में मोच आ गई। जाते समय महाराणा ने कहा, ''मेरे लिये जो कुछ लिखा गया है वह आपने यहां आकर देख ही लिया है। अब जो चाहो सो कर लेना।''

इधर सारे षड़यंत्र में महाराणा को कुन्दनलाल की भूमिका का पता चला। उसे दरबार में हाजिर किया गया। महाराणा ने कहा- ''तुझे और तो कोई सजा देना नहीं चाहता हूं। केवल यही कि तू उदयपुर छोड़कर बाहर चला जा।'' तब कुन्दनलाल को विवश हो नाथद्वारा चले जाना पड़ा।

कुन्दललाल नग्न चित्र बनाने में बड़े प्रवीण थे। ऐसे उन्होंने सैकड़ों चित्र बनाये। एक दिन जब वे अपने कमरे में किसी औरत को नंगी बिठाकर चित्र बना रहे थे कि उनकी पत्नी को किसी ने जाकर यह बात परोस दी।

कुन्दनलाल ने जब ये सुना तो उस औरत को बिस्तर में लपेट कर खड़ी कर दी। उनकी पत्नी जब कमरे में गई तो सुनी गई वह बात गलत साबित होने पर उसे बड़ा पछतावा रहा। ऐसे थे मास्टर कुन्दनलाल।

पिता के चांटे ने पोथी लिखवाई अग्रवालजी से

कभी-कभी बहुत सामान्य घटना बहुत बड़ी बात को जन्म दे देती है जो कइयों के लिए बड़ी महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती है। कोई रचनाकार हो चाहे कलाकार, उसके श्रेष्ठत्व के पीछे कोई-न-कोई घटना अवश्य घटती लगती है। ऐसी ही एक घटना मथुरा के रामनारायणजी अग्रवाल के साथ घटी जिसने 'हिन्दी की ख्यात लावणी परम्परा' नामक अति ही महत्त्वपूर्ण और उपयोगी पुस्तक लिखवाई। यह पुस्तक नईदिल्ली के राधाकृष्ण प्रकाशन ने प्रकाशित की। इससे पहली बार लोक में प्रचलित अति ख्यात लावणी परम्परा की विशद जानकारी मिली।

अग्रवालजी ने बताया कि जब वे आठवीं कक्षा के विद्यार्थी थे, अपने पिताजी के साथ मथुरा से अलीगढ़ एक बारात में गए। उस बारात में मथुरा के तुर्रा अखाड़े के पहुंचे हुए गायक नाथीमल उस्ताद भी थे। जब वे अलीगढ़ पहुंचे तो वहां के जाने-माने खिलाड़ी इकट्ठे हुए और बारात-स्थल धर्मशाला के वहां ख्यालों का दंगल जमा कर दिया। दंगल के ख्यालियों ने मिलकर तब जो रंग जमाया उससे आसपास का सारा वातावरण भी थिरक उठा।

यह देख रामनारायणजी की आंखें खुल गई। वे भी उस मण्डली को सुनने पहुंच गये। कुछ ही देर बाद उनके पिताजी उन्हें ढूंढ़ते हुए वहां जा पहुंचे और चुपचाप पीछे से एक जोरदार तमाचा उनके गाल पर जड़ दिया और कान पकड़ कर वहां से ले गये। बोले कि ये मण्डलियां गंदा गाती हैं। इन्हें कभी मत सुनना लेकिन वह बात बनी नहीं। जहां भी उन्हें चंग की थाप सुनाई देती, वे लुकेछिपे वहां पहुंच जाते और दोनों हाथ कान पर चिपकाये बड़ी देर तक उनका गाना सुनते रहते।

बाद में दिल्ली आकाशवाणी का ब्रजभाषा कार्यक्रम जब उनके जिम्मे पड़ा तो लावणी के बड़े-बड़े आचार्यों का उन्हें सान्निध्य मिला। उन्हें उनके दंगल सुनने और अखाड़े देखने का सौभाग्य मिला इससे बचपन की वह रूचि अधिकाधिक रंगत देने लगी। कई वृद्ध लावणीकारों ने उनसे कहा भी कि इस साहित्य को जगजाहिर करिये। नहीं तो असमय ही यह लुप्त हो जायगा।

डॉ. भानावत एवं अग्रवालजी

इस पर रामनारायण ने एक ग्रन्थ ने तैयार कर प्रकाशक को भी दिया पर बाद में उस प्रकाशक ने उनकी वह पाण्डुलिपि ही गायब होने की बात कह उन्हें घोर निराश कर दिया। उन्हें लगा कि पाण्डुलिपि क्या गई जैसे उनका कोई प्रियजन ही उनसे बिछुड़ गया है।

उसके बाद वृन्दावन में उन्होंने 'ब्रजकला केन्द्र' की स्थापना की तो उन्हें लगा कि लावणी विषयक वह कार्य करना जरूरी है। इस बीच वे प्रेरक भी नहीं रहे जो उन्हें प्रोत्साहित कर सामग्री जुटाने में भी बड़े मददगार थे। एकबार रामनारायणजी के बुलावे पर मैं ब्रजकला केन्द्र की एक संगोष्ठी में वृन्दावन गया तो उन्होंने बताया कि यह कार्य पूरा हो जब छपकर आया तो इसके माध्यम से बहुत ही समृद्ध लावणी परम्परा और उसके उद्भव तथा विकास की समृद्ध थाती सामाजिकों को हाथ लग सकी। उसी को आधार मान बाद में विविध प्रान्तों में इस पर अच्छी सामग्री हाथ लगी।

इसके माध्यम से न केवल ख्याल की लावणी परम्परा उद्घाटित हुई वरन उसके प्रभाव से अन्य प्रान्तों में जो लोक रंगमंचीय कलाएं पनपीं और विकसित हुईं उनका भी सूत्र मिला। राजस्थान में भी यह परम्परा महाराष्ट्र का प्रभाव लिये रही।

खड़ीबोली में काव्यभाषा को लेकर कई कवियों ने साहित्य के इतिहास में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया परन्तु लोकजीवन में जिन कवियों ने अपनी आशु-रचनाओं और ख्यालों से पूरे जनजीवन को लोकरंजन प्रदान किया और सामाजिक-सांस्कृतिक तथा जीवनधर्म के विविध रूपों में अपनी अमिट छाप छोड़ी, उसका कहीं लेख-उल्लेख नहीं हो पाया।

रामनारायणजी ने इस क्षेत्र में अपने शोधानुसंधान से जो मार्गदर्शनीय कार्य किया उससे हिन्दी साहित्य में लोकचेतना की गरिमामय प्रतिष्ठा का बीजारोपण हुआ और उन पक्षों को उकेरा गया है जो अन्यों के लिए कार्य करने का मार्ग सुलभ करते हैं। इसमें राजस्थानी ख्यालों पर भी एक पूरा अध्याय है। मुख्य-प्रमुख लावणीकारों के परिचय तथा ख्यालों द्वारा इस साहित्य को विविध छन्दों, राग-रागिनियों, रंगतों तथा सामाजिक-सांस्कृतिक अभिरूचियों का अध्ययन भी कई नये संकेत प्रदान करता है।

रामनारायणजी से मेरा बड़ा लगातार सम्पर्क रहा। एकबार जब वे नाथद्वारा के साहित्य मण्डल द्वारा आयोजित साहित्यकार सम्मान समारोह में आये तो उदयपुर भी मेरे से भेंट करने आये। वे पं. जवाहरलाल नेहरू के अनन्य मित्रों में से थे। उन्हीं की प्रेरणा से उन्होंने 'ब्रज कला केन्द्र' की स्थापना की। खद्दर की धोती, कुर्ता और टोपी पहने सच्चे देशभक्त और गांधीवादी बने रहे।

- म. भा.

'पूष क त्यार' : एक नहीं अनेक आयाम

- दिनेश रावत -

देवभूमि उत्तराखण्ड के सीमांत उत्तरकाशी का पश्चिमोत्तर रवाँई अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टता के लिए सदैव ही विख्यात रहा है। इस लोकांचल में होने वाले पर्व-त्योहारों की श्रृंखला जितनी विस्तृत है, सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से उतनी ही समृद्ध है।

पर्व-त्योहारों के आयोजन में प्रकृति व संस्कृति, ऋतु व फसल चक्र की गहरी छाप दिखती है। फिर चाहे वह आयोजन के तौर-तरीके हों या इन अवसरों पर बनने वाले विशेष भोजन, सभी मौसमानुकूल ही बनते हैं। इस दौरान जो रंग दिखते हैं वह बहुत ही न्यारे और प्यारे हैं। 'पूष क त्यार' यानी 'पौष के त्योहार' इस लोकांचल में होने वाले पर्व-त्योहारों में प्रमुखता से शामिल हैं। माघ माह तक इनकी रंगत बनी रहने पर इन्हें 'माघी मघोज' या 'मरोज' भी कहते हैं।

पौष माह में इस अंचल की अधिकांश पर्वत श्रृंखला बर्फ की चादर ओढ़ लेती हैं। कई बार बर्फ की वहीं श्वेत चादर घाटी या तलहटी में बसे गाँव-घरों को भी अपने आगोश में ले लेती है। पहाड़ियों से बहती बर्फीली बयार लोगों के लिए मुसीबत का सबब बन जाती है।

लोग एक प्रकार से घरों में कैद हो जाने को विवश हो जाते हैं। खेत-खलिहान, घर-आँगन बर्फ से पटे होने पर खेती-किसानी, पशु-मवेशियों सम्बंधी कार्यों में भी कुछ समय के लिए ठहराव-सा आ जाता है।

फलत: दिन-रात जीतोड़ मेहनत करते लोकवासियों को आराम-विश्राम के लिए भी सहज समय सुलभ हो जाता है। ससुराल विवाही हुई कई लड़कियों जिन्हें 'द्वियाण्यिाँ' कहते हैं, उन्हें भी पाल्यों सहित मायके आने का अवसर मिल जाता है। प्रकृति प्रदत्त इन्हीं परिस्थितियों को अवसरों में तब्दील करते हुए क्षेत्रवासी त्यार यानी त्योहार मनाने लग जाते हैं। जो 'पूष क त्यार' या पौष के त्योहार के रूप में प्रसिद्ध-प्रचारित-प्रसारित हैं।

शर्द हवाओं के बीच सम्पन्न होने वाले पौष के त्योहार 'लटकू', 'चूरियाच', 'कीसर', 'हतली' व 'अदको' त्योहारों का सम्मुचय है। जो परंपरागत ढंग से श्रृंखलाबद्ध मनाए जाते हैं। हर दिन कुछ विशेष व्यंजन बनाए जाते हैं। पौष त्योहारों की रंगत 25 गते पौष से शुरू होकर माघ 'मघोज' तक बनी रहती है। पहले दिन 'लटकू' मनाया जाता है। लटकू के दिन बाड़ी बनाने की परंपरा प्रचलित है। बाड़ी खूब पकाया-खाया जाना वाला प्रमुख व प्रसिद्ध पहाड़ी व्यंजन है, जो गेहूं के आटे से बनता है। इसे 'लटक-कू बाड़ी' कहते हैं। पौष्टिकता से भरपूर बाड़ी को सुस्वादू बनाने के लिए उसके साथ घी, शहर, गुड़ का घोल आदि मिलाकर खाते हैं।

किवदंति है कि राजशाही के जमाने भी यदि कोई व्यक्ति बंदीगृह में बंद होता था तो पौष त्योहारों के लिए उसे भी पाँच दिन के लिए छोड़ दिया जाता था। ऐसा तब से होने लगा जब किसी व्यक्ति ने राजा से अनुनय-विनय किया कि 'लटक-कू बाड़ी खातू, छोड़ी देन महाराज।'

अर्थात् आज लटकू त्योहार है। मुझे भी लटक-कू बाड़ी खाना था। महाराज! कृपा करके मुझे छोड़ दीजिए। लटकू त्यार सुनकर राजा के मन में उत्सुकता जागी और उससे पूछा कि यह कौनसा या कैसा त्योहार है? तो उसने राजा को लटकू, चूरियाच, कीसर, हतली, अदको के बारे में बताया। यह भी कहा कि त्योहारों के लिए मेरी बहिन-भांजे, बुआ-भाई, नाते-रिश्तेदार, आसपड़ौस के सभी लोग इक्ट्ठे होकर त्योहार मनाने की तैयारी में जुटे होंगे। महाराज! कहीं ऐसा ना हो कि मेरे घर न पहुँचने पर वे भी व्यथित होकर त्योहार ना मनाएं। यह सुनकर राजा का हृदय द्रवित हो उठा और उसे पाँच दिन के लिए घर भेज दिया गया था।

दूसरे दिन 'चूरियाच' मनायी जाती है। चूरियाच के दिन दाल भरी रोटी बनायी जाती है। रोटियों के अंदर उड़द, मसूर, भंगजीर, पोस्त दानें आदि भरे जाते हैं। भरी रोटियों को 'बेडली रोटी' कहते हैं। कुछ लोग दोहरी रोटी भी बनाते हैं, जिन्हें 'दुनली' कहते हैं। चूरियाच को 'चूरोल', 'चूरैल' या 'चूरोई' भी कहते हैं।

तीसरे दिन यानी 27 गते पौष 'कीसर' होता है। कीसर के दिन कोई खीर तो कोई खिचड़ी बनाते हैं। खिचड़ी में अखरोट, भंगजीर, पोस्त के बीज (दाने) भुनक सिलबट्टे में पीसकर मिश्रण तैयार करके मिलाया जाता है। कीसर की खिचड़ी में नमक नहीं डलता है। घी का विशेष महत्व होने पर लोकवासी 'कीसर' के लिए पहले से ही पर्याप्त घी जमा किए रहते हैं।

कीसर के दिन जिस तरीके से घी का बंटवारा होता है वह गौरतलब है- घी को किसी खुले बर्तन में निकाल लिया जाता हैं। बंटवारा समान हो इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है। बंटवारे में बहू-बेटियों को पुरुषों की अपेक्षा दूगुना घी दिए जाने की परम्परा प्रचलित है, जिससे लोक विशेष में प्रचलित महिला सम्मान सम्बंधी भाव-स्वभाव का सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

इसमें ससुराल विवाही हुई लड़कियाँ भी समान हिस्सेदार होती हैं फिर चाहे वे उस दौरान मायके में उपस्थित हों या नहीं। अनुपस्थिति की स्थिति में उनके हिस्से का घी सुरक्षित रखकर माघ 'दोफारी' के साथ ससम्मान लड़की ससुराल पहुँचा दिया जाता है। क्षेत्र के महासू मंदिर में कीसर के दिन रात्रि जागरण होता है। प्रसाद स्वरूप खिचड़ी बनती-बंटती है। कीसर के अगले दिन 'हतली' होती है।

'हतली' के दिन कई गाँवों में भेड़-बकरी काटी जाती हैं। लोग सुबह के समय आटे की 'लगड़ी' तथा शाम को सीड़ें बनाकर त्योहार मनाते हैं। परंपरानुसार भेड़ व बकरी काटने के दिन भी तय हैं, जैसे-'हतली' के दिन भेड़ और 'अदको' के दिन

बकरा काटा जाता है। चूल्हे पर दिन में यदि मांसाहार भोजन बनता है तो शाम का भोजन बनाने से पहले चूल्हे को गौमूत्र से लीप कर साफ किया जाता है। अगले दिन 'अदको' होता है। 'अदको' के दिन बकरा काटने वाले लोग बकरा काटते हैं और शाम को पुन: चूल्हा-चौका साफ करके पूरी-पकौड़े-प्रसाद (हलवा) बनाकर त्योहार मनाते हैं।

पौष त्योहारों में मौसमानुकूल खानपान ही नहीं बल्कि आसपड़ोस या ग्राम समाज के लोग और नाते-रिश्तेदारों की सामूहिक उपस्थिति के चलते गीत-संगीत-नृत्य भी साथ-साथ चलता रहता है। खाते-पीते, नाचते-गाते, आपसी सुख-दु:ख साझा के यह इतने सुखद पल होते हैं कि इन्हें लेकर वर्षभर लोगों में उत्सुकता बनी रहती है। सभी घरों में शाकाहार-मांसाहार सभी प्रकार के व्यंजन बनते हैं। आसपड़ौस के लोग जिस घर में बैठ जाएं वहीं से आनंद-उत्सव मनाने का दौर शुरू हो जाता है।

गीत-संगीत-नृत्य के दौरान घर के अंदर ही लोग एक गोल घेरे में बैठ जाते हैं। लोकवादक गीत के बोलों के अनुरूप ताल बजाते हैं। ढोल-बाजों के गहरे तालों के साथ गीत गाए जाते हैं। कई बार एकल-युगल तो कई बार जब सामूहिक नृत्य करने लगते हैं तो दृश्य देखते ही बनते हैं।

माकूल मौसम हो तो उत्साही युवाओं की टोलियाँ कई बार खुले आँगन में आकर तांदी गीत गाने से भी नहीं चूकते हैं। इस दौरान गाए जाने वाले लोकगीतों में छोड़े व लामण प्रमुखता से शामिल हैं। छोड़ा गीतों में एक व्यक्ति जहाँ गीत का मुखड़ा उठाकर शुरुआत करता है तो शेष लोग उसके स्वर से स्वर मिलाते हैं, जिसे 'भौण पुरयाणा' कहते हैं। सप्ताहभर तक चलने वाले विविध प्रकार के लोकरंगों को देख मानस मात्र ही नहीं बल्कि प्रकृति भी हँसती-मुस्कुराती, नाचती-गाती-थिरकती दिखाई देती है।

'हतली' और 'अदको' के दिन जो लोग भेड़-बकरी काटते हैं उसके लिए सभी गाँव समाज या आसपड़ौस के लोग एक साथ एकत्रित होकर एक-के-बाद-एक करते हुए नाचते-गाते, खाते-खेलते हुए ग्राम्यजनों की टोली सभी घरों तक पहुँचती हैं। शुरुआत अधिकांशत: बड़े बुजुर्ग या सयाणे के घर से होती है। त्योहारों के लिए कटने वाली बकरियों पर काटने से पहले स्थानीय देवी-देवताओं के नाम से भीगे चावल जिन्हें 'ज्यूँदेव' कहते हैं, डाले जाते हैं। इसे 'बाकरू धुणाणू' कहते हैं। बकरा यदि अपने ऊपर पड़े ज्यूँदेव नहीं झाड़ता है यानी 'धुणिंदू ना' तो उसे जबरन नहीं काटा जाता है बल्कि छोड़ दिया जाता है।

भेड़-बकरी चराने वाले भेडाल, बाजा बजाने वाले बाजगी, खेती-किसानी के लिए औजार तैयार करने वाले लोहार, कुम्हार, पशु-मवेशी, घोड़ा-खच्चर चलाने वाले सहयोगी तथा नाते-रिश्तेदार खासकर दियाणियों के अतिरिक्त गाँव-समाज में निवास कर रहे ऐसे परिवारों जिनका किन्हीं कारणों से त्योहार नहीं होता, उनका हिस्सा उनके घर पहुँचा दिया जाता है या उन्हें अपने घर खाने पर आमंत्रित किया जाता है।

हालांकि वर्तमान में बदलाव के बीच लोगों ने इससे बचना शुरू कर दिया है और त्योहार के लिए भी बाजार पर आश्रित हो गए हैं लेकिन कई क्षेत्रों में यह आज भी अपने मूल स्वरूप को बनाए हुए है।

इस हिमालयी लोकांचल में पौष त्योहारों की प्रासंगिकता इसलिए भी अधिक है कि क्षेत्रवासियों के आजीविका के मुख्य साधन कृषि व पशुपालन होने के कारण यहाँ के वासिंदे वर्ष अपने दैनिक कार्यों में इस कदर जुटे रहते हैं कि उनका आराम-विश्राम के लिए वक्त निकालना बेहद मुश्किल हो जाता है। इन दिनों उच्च हिमालयी क्षेत्रों में रहने वाले भेड़-बकरी पालक भी घर लौट आते हैं। पूरा परिवार एक साथ होता है। गाँव में खूब चहल-पहल बनी रहती है। इसी का लाभ उठाते हुए लोकवासी जीवन की तमाम व्यस्ताओं व विषमताओं को विस्मृत कर पखवाड़े भर तक खाते-खेलते, हँसते-मुस्कुराते, नाचते-गाते हुए आनंद-उत्सव मनाकर अपनी शारीरिक-मानसिक थकान दूर करते हुए आगे के लिए एक नई संजीवनी प्राप्त करते हैं।

लोग स्वयं आराम—विश्राम ही नहीं करते बल्कि अपने घरों की खोटियों (मधुमक्खी पालन का स्थान) को भी कुछ समय के लिए इसलिए बंद कर देते हैं कि मधुमक्खियाँ भी निरंतर जीतोड़ मेहनत करती रहती हैं। इस दौरान यदि हम आराम-विश्राम कर रहे हैं तो इन्हें भी कुछ पल के लिए आराम-विश्राम दिया जाए। लोक प्रचलित इस परम्परा से लोकवासियों की सहृदयता व संवेदनशीलता का सहज अंदाजा लगाया जा सकता है।

पौष त्योहारों में यदि कोई परिवार बकरा काटता है तो बकरे का दिल परिवार के ज्येष्ठ दामाद को भेंट किया जाता है। जो इस बात का प्रतीक होता है कि परिवार के जितने भी नाते-रिश्ते हैं उन सब में से प्रिय व सम्मानीय परिवार के वे दामाद हैं जिन्हें माता-पिता ने पुत्री के रूप में अपने कलेजे का टुकड़ा दिया हुआ है। ज्येष्ठ दामाद ही उसके हिस्से करके अन्य दामादों व परिजनों में बांटता है।

पौष त्योहारों की रंगत ऐसी कि माह बीत जाता है परंतु त्योहार की रौनक खत्म नहीं होती। सात गते माघ 'सुतरयाण' और 8 गते माघ 'खोढ़' मनाया जाता है। लोकगीत की इन पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं—

सात सुतरयाण आठ खोढए झड़ लागिई तिबारियों मांजी।
मेरऐ बांठे की बसोढ़ीए तू धरया बुइऐ कोठारू पांजी।।

अर्थात सात गते सुतरयाण और आठ गते के खोढ़ को याद करते हुए विवाहिता अपनी माँ को संदेश भिजवाती है कि आज बहुत बारिश हो रही है जिस कारण मेरा पहुँचना संभव नहीं है इसलिए माँ! मेरा जो हिस्सा होगा उसे कोठार यानी भंडार गृह में मेरे आने तक सुरक्षित रखे रखना। सुतरयाण और खोढ़ के दिन उन्हीं बकरियों के सिर व पैरों को पकाया जाता है।

सांसारिक चहल-पहल से दूर प्रकृति की गोद में बसा लोक के प्रति आस्थावान यह वही क्षेत्र है जो वर्तमान की आबोहवा के बीच भी अपनी प्रथा-परम्परा, मत-मान्यता, आस्था-विश्वास, रीति-नीति, आचार-विचार, राग-रंग, आनंद-अनुरंजन, संस्कार-सरोकारों को जीवंत बनाए हुए है। मौसम व माकूल समय में त्यौहार मनाने की प्रकृति व संस्कृति को इस हिमालयी लोकांचल का वैशिष्टय कहा जा सकता है।

स्मृतियों के शिखर (158) : डॉ. महेन्द्र भानावत

पर्यावरण को पौरूष देते फूंक वाद्य

लोकवाद्य अनुरंजन के सशक्त माध्यम हैं। कोई भी त्योहार, उत्सव, अनुष्ठान और उमंग का अवसर हो, लोकवाद्यों की स्वर लहरियां धरती के अणु-अणु में व्याप्त हो सबरंग की वर्षा कर देती हैं। इन वाद्यों की शक्ति अनन्त कोटि की होती है इसलिए विभिन्न देवताओं ने इन्हें अपना आश्रय बनाया। इनके सहारे शक्ति का विपुल संचरण कर सृष्टि के विकास का अलौकिक कौतुक किया।

लोक की मनीषा अपरम्पार और अपौरुषेय है। इस मनीषा ने अपनी आवश्यकता के अनुरूप लोकवाद्यों की संरचना कर सृष्टि के विधि-विधान को समवेत किया। लोकमंगल को सहिष्णु बनाया तथा ताल-लय की तपन-लपन से राग-रंग देने का सद् भगीरथ किय्हा। राजस्थान की रज भूमि ने अनेक अनूठे और अनुपम वाद्यों से लोक लीला का संगी बनाया। इस कारण वे वाद्य ही उस विधा की विशिष्ट पहचान बने। पाबूजी की पड़ के साथ बजने वाला रावणहत्था, देवनारायणजी की पड़ गायकी को उदात्त माधुर्य देता जन्तर, नवरात्रा में भारत गायकी को हाक देता ढाक, होली को हलरावण देता चंग जैसे वाद्य अपने रंग में बेमिसाल हैं। रेगिस्तान के नड़, खड़ताल, मुरला, सुरिंदा, मटकी जैसे वाद्यों ने पूरी दुनिया को सुरभिमय बनाया है। आदिवासियों में प्रचलित वाद्यों का अन्दाज अपने अल्हड़पन की संजीदगी का शिखर बना हुआ है।

वाद्यों की शक्ति अपरिमित है। अपरम्पार है। अनमोल है। नगाड़े जहां आकाश को गड़गड़ाहट देते बीजलियां बरसाने की क्षमता रखते हैं वहीं रणकंकण रणवीरों में अरि दल पर टूटने का ओज और उत्साह बनाये रखते हैं। शक्ति को चलित कर थाली थरथरी देती है। शंख की गूंज आत्मा को अध्यात्म की हवा देकर परमात्म से साक्षात्कार कराने की असीम शक्ति रखती है। बांसुरी सम्मोहन की सृष्टि में सौंदर्य विकीर्ण करती है। वह चेतन को ही नहीं, जड़ जगत तक को अपनी प्रभावना से पूर दिये रहती है।

कई तरह की बीमारियों से मुक्ति दिलाने की अजेय गाथाएं इन वाद्यों की चमक से अटी पड़ी हैं। मनुष्य के स्वस्थ चित्त के साथ-साथ पूरे वातावरण में अनुकूल पर्यावरण बनाये रखने के सुमेरु स्त्रोत भी इन वाद्यों में विनीत हुए मिलते हैं। आदिवासियों के अल्हड़ जीवन की मादक मस्ती की सौंधी महक देते उनके वाद्य कई संकेतों के सूचक बन फैले बिखरे संगठित जीवन के पारदर्शी दर्पण बन सुखमय जीवन में मुदित रहने की आश्वस्ति देते हैं।

वाद्य सजते ही नहीं, सजाते भी हैं। नचते ही नहीं, नचाते भी हैं। भजते ही नहीं, भजाते भी हैं। मचते ही नहीं, हाहाकार भी मचाते हैं। लय ही नहीं देते, प्रलय तक की क्षमता लिये रहते हैं। आघात ही नहीं देते, घात-अघात बनाये रखते हैं। तार-तांत से तुनतुन ही नहीं करते, तनते तनाते तनफन भी करते रहते हैं। थपकी ही नहीं खाते, थाप दे सुलाते सुस्ताते भी हैं। स्वयं ही हिलते डुलते नहीं, अन्यों को भी हिलाडुला कर हिंदवाण बनाये रखते हैं। अंगुलियों की पोरों से ही पंपोले नहीं जाते, डंकों तथा डांडियों से दंडपोल भी दिखाते हैं। संगत ही नहीं करते, संगीत की विविध राग-रागिनियों की ओलखाण भी देते हैं। ये वाद्य चमड़े के, माटी के, काठ के, धातु के बने विविध रूपों, करतबों, स्वांगों तथा लीलाओं को दर्शाते हैं। मृतात्मा की सद्‌गति के लिए थालीसर बाजे के साथ गूंजते गीतों के शकुन मृतक को स्वर्गारोहण की राह दिखाते हैं। इन वाद्यों की कुल सत्ता में फूंक वाद्यों का अपना विशेष महत्त्व एवं माहात्म्य है। यहां संक्षेप में राजस्थान में प्रचलित ऐसे वाद्यों की हवाई उड़ान दिखाई जा रही है।

नड़ :

बांसुरी की तरह का चार फीट के करीब लंबाई लिए नड़ कंगोर या सुपारी की लकड़ी का बना चार छेदी वाद्य होता है। वादक स्वयं इसे तैयार कर लकड़ी को फटने से बचाने के लिए तेल चुपड़ देता है फिर मजबूती तथा कलात्मकता देने रंगबिरंगी रेशमी डोरी या फिर सूती डोरी अथवा तार लपेट देता है।

नड़ की आवाज मोटी पर गंभीर होती है। यह आवाज फूंक के स्वर की बजाय गले के माध्यम से दी जाती है जिससे गले पर अधिक जोर पड़ता है। स्वांस फूलने लग जाती है। यही कारण है कि एक साथ नड़ लंबे समय तक नहीं बजाई जा सकती। चार सुरों में बांधे जाने वाले लोकगीत ही इस पर अधिक बजते-बजाये जाते हैं। बिलोचिस्तान का यह प्रमुख वाद्य है किंतु कालान्तर में सीमावर्ती मरु क्षेत्र का वाद्य बन गया। यह सांडियां, बकरियां, तथा भेड़ें चराते समय लड़के-लड़की भी बजाते हैं। इसके साथ सर्वाधिक लाली नामक गीत सुखदता से शोभित होता है।

लाली गीत की बड़ी सुंदर कथा है। इसके अनुसार लाली नाम की लड़की ने अपनी नानी से एकबार सांड्यें चराने को कहा। नानी बोली- यह काम मर्दों का है, लड़कियों का नहीं। तुम्हारा काम तो चरखा चलाना तथा भरत भरना है। यह सुन लाली रुस गई। तीन दिन अन्न-पानी नहीं लिया तब नानी ने सांड्यें लाकर दी। लाली ने मरदाना वेश पहन नड़-हथियार हाथ में लिये और सांडनियों से कहा- विलायत में सदोरा बादशाह का बड़ा शानदार बगीचा है। उसे चरना है। सांड्यों के साथ लाली बगीचे में पहुंची। देखते-देखते रातोंरात सांड्यों ने बगीचा साफ कर दिया। माली ने फरियाद की। लाली ने नड़ पर सुरंगा गीत छेड़ा जिससे मोहित हो बादशाह बगीचे में आया। दोनों ने मिल प्रेमालाप किया।

पाकिस्तान से लंगों द्वारा लाया गया यह वाद्य रेत के टीलों पर बैठ ठंडी रातों में गाया जाता है। नड़ बजाने में करणा ने बड़ी ख्याति पाई। डाकू के नाम से प्रसिद्ध करणा अपनी लंबी गोल जलेबीनुमा मूछों तथा नड़ वादन के लिए भी बड़ा आकर्षण देता रहा।

उसने बताया कि नड़ बजाना सरल नहीं है। शरीर की नाड़ी की नड़ की सूरतां जब एकमेव हो जाती है तब नड़ से सुर निकलता है। उसने सदैव अपने सिर के साफे के भीतर मंदिर बना भगवान को बिठाये रखा। बोला- 'हर सुबह भगवान को रिझाने के लिए नड़ का सुर ही मेरी आरती बनता है। राधा-कृष्ण और शिव-पार्वती सदैव मेरी रक्षा करते हैं। मैंने डाके तो कई डाले पर अपने देश में कभी नहीं डाला और न किसी बहिन-बेटी से छेड़खानी की।'

बांसुरी-अलगोजा :

बांसुरी बांस पीतल अथवा अन्य धातु की छह छेद लिये होती है। फूंक देने के लिये एक छेद मुंह की ओर होता है। बांसुरी की तरह का ही अलगोजा होता है जो तीन या पांच छेद लिये होता है। नली के ऊपरी मुख को छीलकर लकड़ी का एक गट्टा चिपका दिया जाता है। प्राय: दो अलगोजे एक साथ बजाये जाते हैं। इनमें एक से सा की ध्वनि उच्चरित होती रहती है जबकि दूसरे से भिन्न-भिन्न स्वर निकाले जाते हैं। भील तथा कालबेलिया जाति के लोगों का अलगोजा प्रिय वाद्य है जिनके गीत प्राय: तीन या चार स्वरों पर आधारित होते हैं।

शृंगी :

शृंगी में सर्प को मोहित करने की अद्‌भुत शक्ति होने के कारण कालबेलियों में इसका अधिक प्रकार है। यह घीया या तूम्बे की बनी होती है। इसका नीचे का हिस्सा गोलाई लिये होता है जिसमें मामूली छेदकर बांस की दो नलियां मोम द्वारा चिपका दी जाती हैं। इनमें एक के तीन तथा दूसरी के नौ छेद होते हैं। नलियों के मुख में नल बांस की दो पत्तियां लगी रहती हैं जिनसे ध्वनि उत्पन्न होती है।

शहनाई :

शीशम, सागवान अथवा टाली नामक लकड़ी से निर्मित शहनाई बड़ा ही सुरीला वाद्य है। चिलम के आकार की यह आठ छेद लिये होती हैं। तीक्ष्ण तथा मधुर ध्वनि देती शहनाई का पत्ता ताड़ के पत्ते-सा होता है। इसे बजाने के लिए नाक से बराबर श्वांस लेना होता है ताकि मुंह में श्वांस बना रहे। विवाहोत्सव पर तथा राजा-महाराजाओं के वहां इसका निरन्तर स्वर वातावरण को सुरचित बनाये रखता था।

सतारा :

सतारा रेगिस्तान क्षेत्र के बाड़मेर जैसलमेर निवासी गडरिया, मेघवाल और मुस्लिम जाति के लोगों में प्रचलित अलगोजा, बांसुरी तथा शहनाई का मिलाजुला वाद्य है। अलगोजे की तरह इसमें दो बांसुरियां होती हैं। एक आधार स्वर देती है जबकि दूसरी के छह स्वर होते हैं। दोनों हाथों की अंगुलियों से इसे बजाया जाता है। छह छेद वाली बांसुरी के पांच छेद मोम से बंद रखे जाते हैं जिन्हें आवश्यकतानुसार सप्तक में परिवर्तित किया जा सकता है।

मशक :

मशक बकरे की पूरी खाल से बनाई जाती है। इसमें एक ओर मुंह में हवा भरी जाकर नीचे की ओर लगी नली के छिद्रों से स्वर निसृत किये जाते हैं। वादक मुंह से हवा भरता जाता है और दोनों हाथों की अंगुलियों द्वारा स्वर निकालता रहता है। पूंगी की सी ध्वनि दिये मशक भैरुजी के भोपों में अधिक प्रचलित है।

मोरचंग :

फूंक वाद्यों में मोरचंग लोहे का बना छोटा सा वाद्य होता है जो ओठों के बीच रखकर बजाया जाता है। एक गोलाकार हेंडिल से दो छोटी और लम्बी छड़ों के बीच पतले लोहे की रीड रहती है। इसके मुंह पर थोड़ा-सा घुमाव दे दिया जाता है। होठों में इसे दबाने के बाद श्वांस-प्रश्वांस द्वारा रीड में कंपन होता है। मड़े हुए हिस्से पर अंगुली से आधात कर स्वर तथा लयात्मक ध्वनि निकाली जाती है। गीतों के साथ लय देने में भी मोरचंग बड़ा उपयोगी वाद्य है।

तारपी-पावरी :

जनजाति के वाद्यों में नृत्य के समय बजाया जाने वाला तारपी कथौड़ी जाति के लोगों का वाद्य है। सूखी लौकी की खोल के नीचे छोटा सा छेद कर उसमें पतले बांस की दो नलियां चार-चार छेदकर मोम द्वारा लगा दी जाती हैं। बरु के खोखले तीन-चार इंची टुकड़े से चीप तैयार की जाती है जो मुंह में रख फूंक मारने पर ध्वनि पैदा करती है। इसे पूंपाड़ी कहते हैं। लौकी के मध्य के छेद पर बाहर से एक-डेढ फीट लंबे गाय के सींग का टुकड़ा तथा पतले बांस का डेढ़-दो इंची टुकड़ा लगा दिया जाता है। मोम द्वारा विभिन्न हिस्से एक-दूसरे से जोड़ दिये जाते हैं।

पावरी :

बांसुरी-अलगोजे की तरह ही पावरी होता है जो बांस से निर्मित दो-तीन फुट की लम्बाई लिये होता है। इसके मध्य में टूंटी द्वारा फूंक मारी जाती है तथा मादा भाग के छिद्रों पर हाथों की अंगुलियों से स्वर निकाले जाते हैं।

-शेष पृष्ठ सात पर

शब्द रंजन

उदयपुर, बुधवार 15 फरवरी 2023

सम्पादकीय

परीक्षाओं का झमेला

हमारा देश प्रकृति प्रधान, मौसम प्रधान, ग्राम्य प्रधान देश है। वर्ष भर के बारहों मास छह ऋतुओं में विभाजित हैं मगर परीक्षाओं की कोई ऋतु नहीं है। आये दिन होने वाली विभिन्न परीक्षाओं में परीक्षार्थियों का रेला कुछ ऐसा नजर आता है कि राह चलतों की मुश्किलें भी कई तरह से बढ़ जाती हैं।

जहां परीक्षा केन्द्र होते हैं वहां के तो हाल ही बेहाल होते हैं। सारे विद्यालयों-महाविद्यालयों की पढ़ाई चौपट। पढ़ने वाले छात्रों का तो प्रवेश सर्वथा वर्जित रहता ही है पर पढ़ाने वाले गुरुजी और गर्जी तक का प्रवेश बमुश्किल ही हाजिरी दर्ज कराने का रहता है।

परीक्षार्थी अपने घरों-गांवों से किस मुसीबत से आते हैं, यह उनसे कोई पूछे। तीन घण्टे की परीक्षा देने दो घण्टे पहले आओ। बड़े कठोर नियत्रंण में सर्दी का जाप्ता करने वाला उनका पहनावा ही नहीं, चप्पल तक खुलवाये जाते हैं। मोबाईल धरवा दिये जाते हैं। उनके लिए न कोई सुरक्षित स्थान और न कोई देखभाल। बच्चे ठिठुरन की और अपने कीमती सामान की असुरक्षा की टेंशन लिए परीक्षा देने को विवश होते हैं।

इस भीड़भाड़ में न पीने के पानी की उपलब्धता, न टट्टी-पेशाब की व्यवस्था और न किसी तरह का ठौरठिकाना। इस बीच दूसरी पारी के बच्चे भी आ जाते हैं। वे कहां खड़े रहें, बैठें, मन रमायें और फिर शाम को जाने की चिन्ता। उस समय बस स्टेण्ड और रेलवे स्टेशन का नजारा भी कोई देखें।

पुराने स्कूल ऐसे गलीकूचों में हैं कि वहां पहुंचना भी दूभर। पूछने पर अव्वल तो कोई बताता नहीं और बताता भी है तो उसका इशारा पाकर भटकाव ही मिलता है।

इतना सबकुछ होने पर भी जब पेपर आउट हो जाता है तब सारे किये कराये पर पानी फिर जाता है। इसकी जिम्मेदारी लेने वाला कोई धणीधोरी नहीं। कहते हैं, सरकार के कान नहीं होते, पांव होते हैं। वह सुनती नहीं, बस चलती है। बकौल हास्य कवि गोपाल प्रसाद व्यास के - 'सलवार चली, सलवार चली, धोती को फाड़ चली, साड़ी को पछाड़ चली।'

क्या ऐसा नहीं हो सकता कि संभाग स्तरीय मुख्यालयों को स्वतंत्र रूप से परीक्षा लेने का जिम्मा सौंप दिया जाय ताकि परीक्षा बोर्ड-संस्थान का एकल भार बोझ न बन आसानी से नियंत्रित हो सके। ऐसी व्यवस्था हो कि परीक्षा स्थल एक ऐसा मन्दिर लगे जहां छात्र स्वस्थ तन-मन से आकर परीक्षा भज सके।

आर्ची ग्रुप द्वारा सोसायटी समर्पण

उदयपुर (ह. सं.)। आर्ची ग्रुप ऑफ बिल्डर्स द्वारा न्यू भूपालपुरा स्थित अपने नये प्रोजेक्ट आर्ची आर्केड में रेजीडेंशियल वेलफेयर सोसायटी का गठन किया गया।

इसमें आर्ची ग्रुप के ऋषभ भाणावत, विनीत सरूपरिया, लोकेश मल्हारा, राजीव जैन, डूंगरसिंह कोठारी, शैलेष सरूपरिया, हिमांशु चौधरी ने नवगठित सोसायटी कार्यकारिणी को सोसायटी से संबंधित दस्तावेत सुपूर्द किये। नवगठित कार्यकारिणी में डॉ. तुक्तक भानावत अध्यक्ष, पीयूष पारीक सचिव, आलोक लसोड़ कोषाध्यक्ष, राजीव जैन उपाध्यक्ष, पुलकित अग्रवाल संयुक्त सचिव एवं कार्यकारिणी सदस्यों अमित शर्मा, दिनेश जैन, मनीष जैन, राजेन्द्रकुमार जैन तथा हितेश मोगरा ने वेलफेयर सोसायटी का कार्यभार संभाला।

आर्ची ग्रुप के निदेशक विनीत सरूपरिया ने बताया कि आर्ची आर्केड काम्प्लेक्स की नीव वर्ष 2019 में रखी गई थी। दो-दो कोरोना काल के बावजूद ग्रुप ने अपनी मेहनत, लगन और सहयोग से काम्प्लेक्स का कार्य नियत समय पर पूर्ण कर रहवासियों के प्रति अपने वचन का पालन किया है। इस अवसर पर मुकेश कलाल ने भी विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर राजेन्द्रसिंह पंवार, दीपेश चौधरी, सुरेश व्यास, गोपाल विश्नोई, पंकज मीणा, हरीश पुष्करणा, मांगीलाल खटीक, प्रशांत कर्ण आदि उपस्थित थे।

लोकसाहित्य को सांस्कृतिक सुरक्षा की जरूरत : डॉ. भानावत

साहित्य संस्थान राजस्थान विद्यापीठ विवि और लोकजन सेवा संस्थान की ओर से 14 फरवरी को राजस्थान की कला व संस्कृति विषयक संगोष्ठी में लोककलाविद् डॉ. महेन्द्र भानावत ने कहा कि लोककला अपनी विशिष्टता में अनुष्ठानमूलक है। गवरी सबसे बड़ा उदाहरण है। उसे म्यूजियम में नहीं लोक के दर्शन के रूप में देखना चाहिए। मनुष्य अपनी लेखनी, वाणी से अनुभूतियों को जगजाहिर कर सकता है। दृश्य से ज्यादा अदृश्य है। मीरांबाई की खोज के लिए छह प्रान्त देखे, उसके अनेक पक्ष अदृश्य हैं। उनकी पदावलियां और पदों की खोज कम रोचक नहीं है।

परिपक्व शब्दों से अनुभव की यात्राओं को लक्षित करते हुए डॉ. भानावत ने कहा कि अध्ययन करने के लिए भटकना नहीं पड़ता। मीडिया के दौर में यह प्रसन्नता का विषय है कि जो लिखा गया, व्यर्थ नहीं गया। तुर्रा-कलंगी के खेल इसके उदाहरण हैं। उन्होंने लोकदेवता कल्लाजी और अन्य लोकदेवताओं के प्रसंग सुनाए तथा कहा कि लोकसाहित्य के अध्ययन के लिए उनकी चौकी और चौपाल भी एक सशक्त माध्यम है। अदृश्य जगत ज्यादा मिलता है। जनजातियों के सांस्कृतिक विश्वासों को परखा जाना चाहिये। उन्हें सांस्कृतिक सुरक्षा की जरूरत है।

उन्होंने कहा कि युगों के अनुसार आयुष्य और पलाफल होता है- बड़ल्या हींदवा का आख्यान, हल्दीघाटी-मानसरोवर सब स्थान प्रेरक हैं। सारा ज्ञान-विज्ञान अदृश्य है और मनुष्य के लिए प्रेरक है।

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' ने कहा कि राजस्थान मूल रूप से सांस्कृतिक सम्पदा से धनी प्रदेश है। यहां का लोकसाहित्य भारत के शास्त्रों की रचनाओं का मूल आधार रहा है। नाट्यशास्त्र, नाट्य रत्नकोश, काव्य मीमांसा जैसे ग्रंथों में जो बीज हैं, वे इस प्रदेश में सुरक्षित हैं क्योंकि यह ऐसी विशिष्ट गुण वाली भूमि है जो बीजों को सुरक्षित और पोषित कर नित्य भंडारण करती है।

डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित ने 'जग निवास ब्रजभाषा' के ग्रंथ के आधार पर मेवाड़ की संस्कृति की रूपरेखा प्रस्तुत की। उन्होंने वस्त्राभरण, छत्र, चामर, मन्दिर, अलंकरण आदि को विस्तार से समझाया।

डॉ. जे. के. ओझा ने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से राजस्थान की विशेषताएं बताते कहा कि राजस्थान की लोकदेवियां युग-युगीन रही हैं। वे सर्वत्र पूजित हैं और उनकी अपनी आनुष्ठानिकता रही है। वे मनोकामनाएं पूर्ण करती हैं। महिलाएं उनकी वार्षिक पूजा कर आशीष प्राप्त करती हैं। कुल देवियों, गोत्र देवियों, द्वार देवियों से परिवार फलते-फूलते हैं। जयप्रकाश चौबे ने धन्यवाद दिया।

- डॉ. मनीष श्रीमाली

कटारिया कद्दावर नेता

राजस्थान विधानसभा में प्रतिपक्ष के नेता और उदयपुर के विधायक के रूप में अपनी कद्दावर छवि के रहते गुलाबचन्द कटारिया ने बड़ा नाम बनाया है। स्कूली जीवन से ही उनमें नेतापन के पूत के पांव दिखने लग गये थे फिर स्कूल में माड़साब रहते भी उनके चेहरे पर राजनीति का रंग दमकने लग गया था।

अपनी चार दशक की राजनीति में वे चार वर्ष जैनत्व धारण किये रहे। वे प्रारम्भ से ही संघ के अनुशासित सिपाही बने रहे। इसलिए वे अपने जीवन में भी अनुशासित रह राजनीति में भी भाजपा का पाला पकड़ा तो उसी की पाणत करते रहे। अपने फेरे में ही वे अपनी बाड़ी खिंचते रहे। किसी दलबदलू के शिकार नहीं हो अंगद का पांव बनाये रहे।

एक स्पष्ट वक्ता और पारदर्शिता रखते वे अपनी बातों में बेबाक रहे। यही कारण रहा कि अपनी बयानबाजी से वे विवादों में रहे परन्तु उन्होंने उसे वादविवाद का विषय नहीं बना माफी मांगते साफगोई का परिचय दिया।

अपने राजनैतिक केरियर में भी कटारियाजी साधारण शिक्षक बने रहे। असाधारण और विशिष्ट-अति विशिष्ट होने पर भी उन्होंने आम जनता से अपना सम्पर्क बनाये रखा। जनकल्याणकारी रिश्तों तथा कार्यों पर अधिक ध्यान देकर उन्होंने जो छवि बनाई उसके कारण विरोधियों की जमात भी उनके खिलाफ हो गई। अपने लोग भी उनके मुखर खिलाफ हुए।

यह खुश खबर ही है कि कटारियाजी को असम का राज्यपाल बनाया गया है। इस अवसर पर एक कवि द्वारा लिखी पंक्तियां याद आ रही हैं जिनमें तोता कह रहा है-

सोने के पिंजरे में भी यदि करना पड़ा मुझको वास।
नरक तुल्य मुझको वह होगा बनकर औरों का दास।।

लेकिन यहां तो कटारियाजी के लिए वैसी बात नहीं है। वे सदैव ही कहते रहे कि पार्टी मुझे जो भी जिम्मेदारी देगी, मैं पूरी निष्ठापूर्वक उसका निर्वाह करूंगा।

इस सन्दर्भ में खड़ी बोली के प्रथम महाकाव्य 'प्रिय प्रवास' में अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की लिखी काव्यपंक्ति याद आ रही है- 'प्यारे जीवें, जग हित करें, गेह चाहे न आवें।'

'शब्द रंजन' की बहुत-बहुत बधाई।

- डॉ. तुक्तक भानावत

पिम्स में फेंफड़े में हरी फफूंद का सफल इलाज

उदयपुर (ह. सं.)। पेसिफिक इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज (पिम्स) हॉस्पिटल, उमरड़ा में चिकित्सकों ने हरी फफूंद का सफल इलाज कर मरीज को नया जीवन दिया है।

पिम्स के चेयरपर्सन आशीष अग्रवाल ने बताया कि गत दिनों हॉस्पिटल के श्वसन एवं दमा रोग विभाग में 20 वर्षीय मरीज को दमा, खांसी, जुखाम के साथ खून आने की शिकायत पर भर्ती कराया गया। एक्सरे करवाने पर पता चला कि उसकी छाती में दाहिनी तरफ निमोनिया है, जो इलाज के बावजूद आगे से आगे बढ़ रहा था। हॉस्पिटल के विशेषज्ञ चिकित्सकों की देखरेख में दूरबीन द्वारा फेंफड़े की जांच की गई तो फेंफड़े में पस भरा हुआ पाया गया। फेंफड़े की धुलाई करवाने पर निकले पानी की जांच की तो मरीज के फेंफड़े में हरी फंगस होने की जानकारी मिली। इस पर डॉ. वाहब मिर्जा, डॉ. संध्या टांक, डॉ. ऋषभ अग्रवाल, डॉ. प्रांशु, डॉ. गुरमेहरसिंह व डॉ. अर्पित जोहर की टीम ने मरीज का एंटी फंगल पद्धति से इलाज किया। इलाज के बाद मरीज एकदम स्वस्थ हो गया और उसे हॉस्पिटल से डिस्चार्ज कर दिया गया।

पोथीखाना

पत्रों के माध्यम से 'आधी सदी का सफरनामा'

श्री साहित्य प्रकाशन शाहदरा दिल्ली से 'आधी सदी का सफरनामा' लेखकों के पत्र सम्बोधन के नाम यशस्वी साहित्यकार क़मर मेवाड़ी के सम्पादन में 2022 ई. में प्रकाशित पुस्तक है। सन् उन्नीस सौ छियासठ ई. से त्रैमासिक पत्रिका सम्बोधन का सफर शुरू हुआ। वह पूरे पचास वर्षों तक अनवरत अपनी भूमिका का निर्वहन बखूबी खूबसूरत तरीके से स्वर्ण जयन्ती का सोपान पूर्ण कर हिन्दी साहित्य पत्रिका के कोश में अभिवृद्धि कर माइलस्टोन साबित हुआ। सच तो यह है कि एक पत्रिका निकालने का ही नहीं वरन् लोकतंत्र की वैचारिक सांस्कृतिक जमीन बनाने का संघर्ष भी था जिसे कमर मेवाड़ी ने पूरी निष्ठा और प्रतिबद्धता से पूरा किया ।

पत्र, पत्रिका समाचार पत्र और पाठक ये सभी एक ही कुनबे के शब्द हैं और इनका आपस में गहरा रिश्ता भी है। इनमें पत्र यद्यपि व्यक्तिगत होते हैं किन्तु उनके विषय और अंतर्वस्तु सामाजिक होती है। सम्वाद ही तो हैं जो मनुष्य को व्यक्ति से समाज का हिस्सा बनाते है।

सम्पादक क़मर मेवाड़ी को जीवन-डगर में आर्थिक परेशानियों का खूब सामना करना पड़ा। फिर भी साहित्य के सच्चे सिपाही बनकर ये डटे रहे। साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन-प्रकाशन गुड्डे-गुड़ियों का खेल नही है। रचनाओं का आमंत्रण, रचनाओं का चयन, प्रूफ कार्य, पत्रिका का प्रकाशन, विधा विशेषांक, साहित्यकार विशेषांक निकालना श्रमसाध्य कार्य है । पुस्तक में संकलित पाठकों के पत्र इस बात का सबूत हैं कि आधी सदी के उतार चढ़ाव वाले लंबे समय तक सम्बोधन ने अपने संकल्प को स्थगन करने के बजाय सुदृढ़ ही किया। बहरहाल सम्बोधन ने अपने पाठकों के पत्रों के माध्यम से एक गम्भीर पाठकीय रिश्ता भी स्थापित किया। परिणामस्वरूप क़मर मेवाड़ी के पास पाठकों के पत्रों का एक कोश ही तैयार हो गया, जिसे प्रकाशित करवाया। इससे यह भी पता चलता है कि पाठक का सम्पादक से ही नही, इसके लेखकों से उसका रिश्ता किस तरह का बना और रहा है।

प्राक्कथन लेखक जीवनसिंह ने सटीक लिखा है- 'सम्बोधन की पचास वर्षीय यात्रा में प्रकाशित इसके पाठकों के पत्र साहित्य, समाज और समय के रिश्तों का एक इतिहास और संस्कृति बनाते हैं। इस पत्रिका ने साहित्यिक प्रशस्तियों से अलग हटकर सच में पाठकों के बीच एक ऐसी आलोचना संस्कृति को विकसित किया जो लोकतंत्र की बौद्धिक जमीन बनाने में मददगार होती है।

कई पत्र बहुत संक्षिप्त हैं। कुछ-कुछ पत्र तो एक-दो लाईन में ही समाप्त हुए हैं, उन्हें देखकर संक्षिप्तिकरण की विधा का महत्त्व उजागर होता है। वैसे ही बिहारी के दोहो में नायिका भी नायक को लिखना तो बहुत कुछ चाहती है पर उसका प्रणय इतना संवेदनशील हो गया है कि पत्र, कलम हाथ में है परन्तु लिखते नहीं बन पा रहा है। इसलिए वह थोड़ा लिखा या कोरा पत्र ही प्रियतम को प्रेषित कर देती है।

'सम्बोधन' जैसी पत्रिका का मूल्य केवल एक पत्रिका होने में ही नहीं है वरन् साहित्य रचना के माध्यम से आधुनिक प्रगतिशील जीवन मूल्यों को लाने और उनको स्थापित करने में है। 'आधी सदी का सफरनामा' लेखकों के पत्र सम्बोधन के नाम पुस्तक पाठकों को पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें पढ़ने के पश्चात अपने विचार पत्र के माध्यम से प्रेषित करने की प्रबल भावभूमि भी प्रस्तुत करती है।

-नगेन्द्रकुमार मेहता 'भव्य'

कविराव मोहनसिंह का रचना-संसार

कविराव मोहनसिंह पुराने रचनाकारों में एक सम्माननीय नाम है। उनके विशद परिचय का आधार उनकी रचनाएं हैं। अपने मौलिक सृजन, सम्पादन और अनुवाद के वे पर्याय रहे हैं। उनकी प्रसिद्धि का महत्त्वपूर्ण आधार उनके द्वारा सम्पादित 'पृथ्वीराज रासौ' है। उदयपुर के राजस्थान विद्यापीठ के 'साहित्य संस्थान' से प्रकाशित इस ग्रन्थ को सर्वाधिक प्रामाणिक एवं शुद्ध माना जाता है।

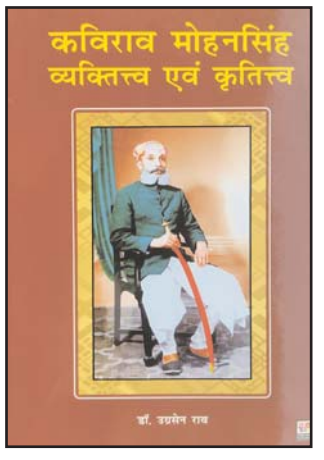

डॉ. उग्रसेन राव लिखित 'कविराव मोहनसिंह : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' एक महत्त्वपूर्ण शोध ग्रंथ है। प्रारम्भ में डॉ. राव ने कविराव का पारिवारिक वंश-परिचय देते उनकी साहित्यिक रूचि एवं लेखनधर्मिता का बड़ा ही रोचक वर्णन दिया है। वेद और उपनिषद को आधार बनाते लेखक ने कवि की, राव की, ब्रह्म की, भट्ट की, पोलपात की, राव राजपूत की तथा शासनिक राव की उत्पत्ति की प्रामाणिक व्याख्या की है।

दूसरे अध्याय में कविराव के जन्म से लेकर शिक्षा-दीक्षा और साहित्य-सृजन के चरम तक का विवरण देते लिखा है- 'कविराव मोहनसिंह देश के संभवत: अकेले ऐसे साहित्यकार हैं, जिनके पूर्वजों का करीब एक हजार वर्ष का इतिहास है। यद्यपि इस परम्परा में कई और भी कवि हुए हैं किन्तु अपर्याप्त जानकारियों के कारण उनके उल्लेख नहीं मिलते हैं।'

लेखक ने कविराव मोहनसिंह के उन सभी पक्षों को भी रखा है जो साहित्येतर होते हुए उनकी विशेष दक्षता का परिचय देते हैं। उनकी विनोद-प्रियता, संगीतानुराग, प्रत्युत्पन्नमति, अतीत प्रेम जैसे गुण उन्हें उस समय के अन्य रचनाकारों से अलग महत्त्वपूर्ण बनाते हैं। अपने समय के ख्यात चरित्रों का प्रभाव भी कविराव पर पर्याप्त रहा है। यह उनकी वक्तृत्व कला से जान पाते हैं। उनसे पूर्व राव बख्तावर जो मेवाड़ के अनेक राणाओं के सहयोगी रहे हैं उनका विशेष प्रभाव भी उन पर पड़ा जो स्वाभाविक है। कविराव ने परम्परा को आगे बढ़ाते आधुनिकता से अपने को प्रासंगिक बनाने का सफल प्रयास किया। इस दृष्टि से उनका साहित्य अतीत और भविष्य का सुन्दर सामंजस्य है।

मात्र सौलह-सत्रह वर्ष की वय में ही कविराव साहित्य-सृजन की ओर प्रवृत्त हो गए। उनकी इस अप्रतिम मेधा के कारण उन्हें तत्काल राजकीय सेवा में ले लिया गया। अपनी सृजन-यात्रा के दौरान ही वे महाराणा फतेहसिंहजी एवं महाराणा भूपालसिंहजी के अनन्य विश्वासपात्र हो गए। इस दृष्टि से कविराव मोहनसिंह की लेखकीय-यात्रा का बड़ा ही रोचक वर्णन इस शोधकृति की एक अन्यतम उपलब्धि है।

कविराव मोहनसिंह ने अपनी साहित्य-साधना से राजस्थानी साहित्य की श्रीवृद्धि में कोई कसर नहीं छोड़ी। लगभग तीन दर्जन से अधिक ग्रन्थों की रचनाकर उन्होंने राजस्थानी काव्य-परम्परा में इतिहास को वाणी देने का स्तुत्य कार्य किया। लम्बे समय तक असमंजस में उलझे रहे इतिहास-नायकों और घटनाओं में तालमेल न हो पाने के कारण जो स्थिति बनीं, कविराव ने उन सन्देहशील धारणाओं को सुलझाने का सार्थक उद्यम किया।

विद्यापीठ के कुलपति प्रो. एस. एस. सारंगदेवोत ने स्पष्ट किया कि भ्रान्त धारणाओं के उन्मूलन से 'पृथ्वीराज रासौ' को अब सर्वाधिक विश्वसनीयता मिली है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ कविराव मोहनसिंह की रचनाओं की सटीक जानकारी के साथ रचनाकार की जीवनगत उन सभी परिस्थितियों जिनसे एक चिन्तनशील लेखक का जन्म होता है, का भी सांगोपांग विश्लेषण लिये है।

- प्रो. मलय पानेरी

'घड़सी बाबा की उदासी' कहानी कहिन

श्री बी. एल. माली 'अशान्त' पिछले पांच दशक से राजस्थानी भाषा, साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में कविता, कहानी, संस्मरण, उपन्यास, ललित लेख तथा व्याकरण जनित विविध विधाओं पर दमदार लेखन कर रहे हैं। उनके विषय ऐसे होते हैं जो हमारे सबके आसपास हेलमेल करते भी बहुत सटीक कलमबद्ध होने से अब तक अन्यों की लेखनी से बचे हुए रहे।

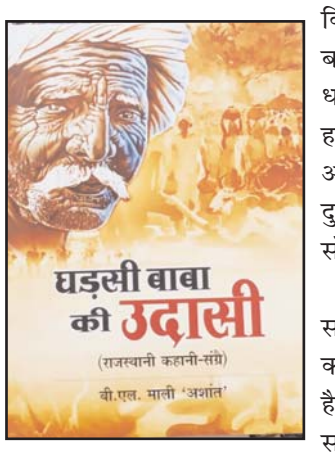

'घड़सी बाबा की उदासी' कहानी संग्रह भी उसी कोटि में है। इसमें घड़सी बाबा कोई ऐसा अजूबा काल्पनिक पात्र नहीं है जिसे यथार्थ की भूमि पर स्थापित कर आदर्श बनाया गया है। वह तो यथार्थवादी कल्पना की अतिरंजित रंगमाला का सुमेरु बन सबके साथ विश्वास का भरोसा बना हुआ है। संग्रह की सभी इक्कीस कहानियां इस दृष्टि से 'इक्कीस' ही हैं।

इन कहानियों का बीज आधुनिक काल और उत्तर आधुनिक काल का प्रस्फुटन लिये है। घड़सी बाबा के माध्यम से कथाकार माली ने धरती और उससे जुड़े युगबोध के दर्दीले दास्तान को चित्रित किया है। इस दृष्टि से घड़सी बाबा एक चिन्तन का प्रतीक है जो धरती पर मण्डराते दिखते खतरे से हमें सावचेत करता है। दर्दीली आहट देती मानवता को बचाता दु:ख घटाने और सुख बढ़ाने की सोच को सकारात्मक सुर देता है।

लेखक की दृष्टि में संग्रह की समस्त कहानियां उत्तर आधुनिक काल का समकित समवेत लिये है। इनका हर कथानक सोच की समझ को शान्त मन के तपन का साक्षी बनता है। उदाहरण के लिए 'पानी प्यासा है' कथन उस विराट चिन्तन के गवाक्ष खोलता है कि पानी के बीज की तलाश करो अन्यथा यह धरती पगला जाएगी।

- म. भा.

लेखक बी. एल. माली के सम्पर्क नं. 9414386094

स्कूलों में बच्चों की शिक्षा को बेहतर बना रहा है लीड

उदयपुर (ह. सं.)। भारत का सबसे बड़ा स्कूल एडटेक यूनिकॉर्न लीड, राजस्थान के स्कूलों में शिक्षा परिणामों को बेहतर बनाते हुए छात्रों में आत्मविश्वास निर्माण कर रहा है। अपने अंतर्राष्ट्रीय स्तर के पाठ्यक्रम, मल्टी मोडल पढ़ाने-पढ़ने की पद्धतियों तथा टेक्नोलॉजी आधारित सुविधाओं के माध्यम से लीड का एनईपी अनुकूल इंटीग्रेटेड स्कूल एडटेक सिस्टम यह सुनिश्चित करता है कि छात्रों को सभी विषयों की गहराई से समझ और विशेषज्ञता प्राप्त हो सके। राज्य में लीड से जुड़े स्कूलों में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं के शिक्षा परिणामों में पिछले दो वर्षों के दौरान 60 प्रतिशत से अधिक सुधार देखने को मिला है। अब तक राजस्थान के लगभग 110 स्कूल लीड का इंटीग्रेटेड स्कूल एडटेक सिस्टम लागू कर चुके हैं, जिससे इनमें पढ़ने वाले 45,000 छात्र-छात्राएं लाभान्वित हो रहे हैं। इसके साथ ही, लीड द्वारा राजस्थान के स्कूलों में पढ़ाने वाले 1040 शिक्षकों को प्रशिक्षित एवं प्रमाणित भी किया गया है।

लीड के सह-संस्थापक एवं मुख्य कार्यकारी अधिकारी सुमीत मेहता ने कहा कि महानगरों एवं बड़े शहरों के स्कूलों की शिक्षा और टियर 2+ शहरों की स्कूलों की शिक्षा गुणवत्ता में बड़ा अंतर है। लीड द्वारा इसी कमी को दूर करने का काम किया जाता है। लीड का इंटीग्रेटेड स्कूल एडटेक सिस्टम भारत के 400+ छोटे-बड़े शहरों के लगभग 3000 स्कूलों में उपलब्ध हो चुका है। इसका सीधा फायदा 12 लाख छात्रों को मिल रहा है और लगभग 25,000 शिक्षकों को प्रशिक्षित करते हुए उन्हें अधिक सक्षम बनाया जा रहा है। लीड के साथ जुड़ने के बाद स्कूल में पढ़ने वाले छात्रों को जीवन में सफलता प्राप्त करने का आत्मविश्वास हासिल होता है और यह इन स्कूलों में सिखाई जाने वाली वाली भविष्य की महत्वपूर्ण लाइफ स्किल्स - कम्युनिकेशन, टीम के रूप में काम करना और गहराई से सोचना, से संभव हो पाता है।

बाजार / समाचार

आचार्य महाश्रमण से चातुर्मास की विनती

उदयपुर (ह. सं.)। श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्य महाश्रमण से चातुर्मास की मांग व सन् 2026 में अहमदाबाद से लाडनूं के बीच उदयपुर पदार्पण की अर्जी लिए शासनश्री मुनि सुरेशकुमार व सहवर्ती मुनि सम्बोध कुमार 'मेघांश' की प्रेरणा से 1100 श्रावक-श्राविकाएं जालोर जिला स्थित पावटी पहुँचे।

आचार्यश्री ने कहा कि आचार्यश्री तुलसी के साथ मर्याद महोत्सव और 2007 में आचार्य महाप्रज्ञ के साथ मैंने उदयपुर में चातुर्मास किया है। एक वर्ष पूर्व ही मेवाड़ (भीलवाड़ा) में चातुर्मास किया है। आगे सन् 2026 तक चातुर्मास घोषित हैं। आप सम्पर्क में रहे, अभी समय है, समय आने पर कुछ चिंतन किया जा सकता है। अपना निवेदन जारी रखे।

अर्जुन खोखावत ने आचार्यश्री से सौलह वर्ष के अंतराल की बात कहते हुए चार्तुमास की मांग की। जिला सहकार समिति अध्यक्ष प्रमोद सामर, तेयुप अध्यक्ष अक्षय बड़ाला, महिला मंडल अध्यक्षा सीमा पोरवाल ने आचार्यश्री को झीलों की नगरी में पदार्पण की मनुहार की। ज्ञानशाला एवं उदयपुर सभा द्वारा आचार्यश्री से गीत के माध्यम से चातुर्मास की मांग की गई। तेरापंथ सभा मंत्री विनोद कच्छारा ने आचार्यश्री से मेवाड़ी भाषा में चातुर्मास की मांग रखी।

जेके टायर का शुद्ध लाभ 24 प्रतिशत बढ़ा

उदयपुर (ह. सं.)। देश के प्रमुख टायर उद्योग प्रमुख, जेके टायर एण्ड इंडस्ट्रीज लिमिटेड (जेके टायर) ने वित्त वर्ष 2023 की तीसरी तिमाही के लिए अपने अन ऑडिटेड वित्तीय परिणामों की घोषणा कर दी है। उक्त अवधि के दौरान जेके टायर ने 3623 करोड़ रुपये के शुद्ध राजस्व पर 67 करोड़ रुपये का कर पश्चात लाभ अर्जित किया है।

जेके उद्योग के चेयरमैन एण्ड मैनेजिंग डायरेक्टर (सीएमडी) डॉ. रघुपति सिंघानिया ने कहा कि हमने दोहरे अंकों में राजस्व वृद्धि के साथ सभी सेग्मेंट्स में मजबूत प्रदर्शन के साथ एक और तिमाही में अपनी लाभप्रदता वृद्धि को बनाए रखा है। कच्चे माल की कीमतों में नरमी, लागत नियंत्रण और समय पर मूल्य संशोधन पर निरंतर ध्यान देने से हमारे लाभ मार्जिन में सुधार हुआ। हमारा मानना है कि बेहतर वाहन उपयोग और बुनियादी ढांचे के विकास पर जोर देने से टायर उद्योग घरेलू बाजार में स्वस्थ मांग देखने के लिए तैयार है। कैवेंडिश इंडस्ट्रीज लिमिटेड और जेके टॉर्नेल, मैक्सिको, कम्पनी की सहायक कम्पनियां इस कंपनी के मजबूत विकास में अच्छा योगदान दे रही हैं। उन्होंने कहा कि हम डायवर्स मार्केट सेगमेंन्ट्स, ऑपरेशन एक्सीलेंस को पूरा करने और बेहतर प्रदर्शन जारी रखने के लिए श्रेणी में सर्वश्रेष्ठ उत्पाद लाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

गुमनाम शहीदों के नाम कपड़े की पट्टी पर उकेरकर रिकॉर्ड बनाये

उदयपुर (ह. सं.)। स्थानीय मनोज आंचलिया और सीमा वेद ने गुमनाम शहीदों के नाम कपड़े की एक पट्टी पर उकेरकर कई रिकॉर्ड अपने नाम किए हैं। ये रिकॉर्ड मनोज आंचलिया ने मेवाड़ पूर्व राजपरिवार के सदस्य डॉ. लक्ष्यराज सिंह के हाथों ग्रहण किये। मनोज आंचलिया और सीमा वेद ने 21 हजार फीट से अधिक लंबे कपड़े पर हजारों ऐसे स्वंतत्रता सैनानियों के नाम दर्ज किए हैं जिन्हें इतिहास में जगह नहीं मिल सकी है।

मनोज आंचलिया ने सत्कार बनर्जी, कृष्णवान काकडे, फनिर्दलाल, तारसवेकार दस्तकारी, दयालसिंह, योगेस्वारलाल, गोविंदसिंह ठाकुर, धनचंद, हीरासिंह आदि कई ज्ञात अज्ञात के प्रसंगों और घटनाओं का समावेश किया है। ऐसे गुमनाम शहीदों और स्वतंत्रता सैनानियों के नाम कपड़े की एक 21 हजार फीट लंबी पट्टी पर दर्ज कर करीब 12 रिकॉर्ड अपने नाम दर्ज किए है। सिटी पैलेस में डॉ. लक्ष्यराज सिंह ने मनोज आंचलिया और सीमा वेद को हाई रेज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड, हार्वर्ड वर्ल्ड रिकार्ड, प्राइमा वर्ल्ड रिकॉर्ड, नेशनल बुक ऑफ रिकार्ड, ग्रेट इंडियन बुक ऑफ रिकॉर्ड इंडिया सर्टिफिकेट, मारबल बुक ऑफ रिकॉर्ड, नेशनल प्राईड अवार्ड जैसे कई रेकॉर्ड बुक में दर्ज होने पर बधाई दी।

सिग्निफाई की फिनिश सोसायटी से साझेदारी

उदयपुर (ह. सं.)। सिग्निफाई, जोकि लाइटिंग के क्षेत्र में दुनिया की एक प्रमुख कंपनी है, ने अपने स्वास्थ्य किरण सीएसआर प्रोग्राम के अंतर्गत सोलर लाइटिंग का इस्तेमाल कर राजस्थान में 20 प्राइमरी हेल्थ सेंटर्स (पीएचसी) को रोशन किया। फिनिश सोसायटी के सहयोग से शुरू की गई इस परियोजना के अंतर्गत, कंपनी ने हर हेल्थ सेंटर में 2.5 किलोवॉट का सोलर पावर प्लांट लगाया है, ताकि इन केंद्रों पर लगातार और बाधारहित बिजली आपूर्ति होती रहे।

ये 20 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के उदयपुर, नागौर, बारां एवं सिरोही जिलों में स्थित हैं। जिले में तृतीयक स्तर पर स्वास्थ्य देखभाल अनुभव को बेहतर बनाने में कंपनी के प्रयासों की सराहना करते हुये, नागौर के जिलाधिकारी आईएएस पीयूष समारिया ने नागौर में आयोजित गणतंत्र दिवस कार्यक्रम में कंपनी को एक प्रशंसा पत्र प्रदान किया।

अभिजीत बैनर्जी, मेंबर सेक्रेटरी, फिनिश सोसायटी ने कहा कि राजस्थान के छोटे जिलों में, इस तरह के प्राइमरी हेल्थ सेंटर्स (पीएचसी) बेहद महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि गैर-संक्रामक रोगों और माता एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं सहित अधिकतर लोगों को इनके द्वारा ही अधिकतम आउट-पेशेंट केयर उपलब्ध कराया जाता है। हालांकि, बिजली की सुचारू आपूर्ति नहीं हो पाने की वजह से इन पीएचसी को अपनी पूरी क्षमता में काम करने में कई परेशानियों का सामना करना पड़ता है और यह उनके लिये एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। इसलिये सिग्निफाई और फिनिश सोसायटी के बीच यह साझेदारी इन समस्याओं का एकदम सटीक समाधान है।

नताशा वाधवा, हेड-सीएसआर, सिग्निफाई इनोवेशन्स इंडिया लि. ने कहा कि हमारे सीएसआर प्रोग्राम का उद्देश्य ऐसे हेल्थकेयर स्थानों का निर्माण करना है, जो ज्यादा सुरक्षित और अच्छी तरह से रोशन हों। देश के हेल्थकेयर इंफ्रास्ट्रक्चर में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमारे नये प्रोजेक्ट की मदद से, पीएचसी को सोलर पावर का इस्तेमाल कर निरंतर बिजली आपूर्ति हासिल हो रही है, जिससे इनके द्वारा पेश की जाने वाली हेल्थकेयर सेवाओं की गुणवत्ता बेहतर होती है।

डॉ. मेधा माथुर राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित

उदयपुर (ह. सं.)। गीतांजली मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल के सामुदायिक चिकित्सा विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. मेधा माथुर ने हैदराबाद में IAPSMCON 2023 के राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रतिष्ठित राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त किया। यह पुरस्कार सामुदायिक चिकित्सा में उत्कृष्टता और योगदान के लिए दिया जाता है। डॉ. मेधा को पूरे पश्चिमी क्षेत्र से इंडियन एसोसिएशन ऑफ प्रिवेंटिव एंड सोशल मेडिसिन (आईएपीएसएम) के कार्यकारी निकाय के लिए राजस्थान के प्रतिनिधि के रूप में भी चुना गया है।

जिंक को जलवायु परिवर्तन पारदर्शिता के लिए 'ए' स्कोर

उदयपुर (ह. सं.)। हिंदुस्तान जिंक को कॉर्पोरेट पारदर्शिता और जलवायु परिवर्तन हेतु नेतृत्व के लिए वैश्विक पर्यावरण गैर-लाभकारी सीडीपी द्वारा अपनी वार्षिक 'ए' श्रेणी में स्थान दिया गया है। यह मान्यता शुद्ध शून्य उत्सर्जन के अपने दृष्टिकोण को प्राप्त करने की दिशा में कंपनी की प्रतिबद्धता का परिणाम है। कंपनी ने अपने विकास और मूल्य-निर्माण हेतु सस्टेनबिलिटी को प्रमुखता और प्राथमिकता दी है।

जिंक के मुख्य कार्यकारी अधिकारी अरुण मिश्रा ने कहा कि सीडीपी ने जलवायु परिवर्तन पर सकारात्मक प्रभाव के लिए हिंदुस्तान जिंक की प्रगति का मूल्यांकन कर विश्व में अग्रणी कंपनी के रूप में मान्यता दी है। बैटरी इलेक्ट्रिक वाहनों, सौर ऊर्जा और विभिन्न अन्य पहलों को अपनाने के माध्यम से भारतीय खनन को डीकार्बोनाइज करने पर हमारा मुख्य लक्ष्य हमें संचालन की कार्यशैली में सस्टेनेबिलिटी के हमारे लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक है।

सीडीपी में कॉर्पोरेशन और आपूर्ति श्रृंखला के ग्लोबल डायरेक्टर डेक्सटर गैल्विन ने कहा कि शुद्ध-शून्य और प्रकृति-सकारात्मक भविष्य की दिशा में पर्यावरणीय पारदर्शिता पहला महत्वपूर्ण कदम है। विश्व में लगातार बढ़ती पर्यावरणीय चिंताओं के वर्ष में अत्यधिक मौसम से लेकर प्रकृति को अभूतपूर्व नुकसान तक परिवर्तनकारी, तत्काल और सहयोगी परिवर्तन की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। हमें वैश्विक जीएचजी उत्सर्जन के आधे हिस्से को डीकार्बोनाइज करना होगा और 2030 तक वनों की कटाई को खत्म करना होगा।

अक्षय के साथ स्टिंग का नया अभियान

उदयपुर (ह. सं.)। पेप्सिको इंडिया की स्टिंग ने अपने नए अभियान की शुरुआत की जिसमें ब्रैंड एंबेसडर और सुपरस्टार अक्षय कुमार नजर आएंगे। इन गर्मियों में लोगों को लुभाने के लिए तैयार यह अभियान के अंतर्गत एक मजेदार और रोमांचक फिल्म भी शामिल है जो ब्रैंड की एनर्जी बोले तो स्टिंग पोजिशनिंग को नए सिरे से दोहराती है।

नसीब पुरी, सीनियर मार्केटिंग डायरेक्टर, एनर्जी, हाइड्रेशन एंड फ्लेवर्स, पेप्सिको इंडिया ने कहा कि स्टिंग सही अर्थों में बेवरेज कैटेगरी में अग्रणी रहा है जिसने संचार समेत विभिन्न चीजों को नए सिरे से परिभाषित किया है। स्टिंग के अभियानों में हमेशा हमारे ग्राहकों की भावनाओं को दर्शाया गया है और इसमें चुटीलेपन, आश्चर्य और बेहतरीन मनोरंजन का इस्तेमाल किया जाता है, ताकि लोगों के बीच जागरूकता को बढ़ावा दिया जा सके और स्टिंग की ऊर्जा से मिलने वाले फायदे लोगों तक पहुंच सके। इस वर्ष भी हम एक और मजेदार अभियान के साथ आए हैं जिसमें फिर से यह जाहिर करने के लिए बढ़ा चढ़ाकर कही जाने वाली बातों का इस्तेमाल किया गया है।

एचडीएफसी बैंक की 'ऑफलाइनपे' सेवा शुरू

उदयपुर (ह. सं.)। एचडीएफसी बैंक ने आरबीआई के नियामक सैंडबॉक्स प्रोग्राम के तहत व्यापारियों और ग्राहकों के लिए ऑफलाइन डिजिटल भुगतान का परीक्षण करने के लिए क्रंचफिश के साथ साझेदारी में एक पायलट लॉन्च किया है, जिसे 'ऑफलाइनपे' के नाम से जाना जाता है। एचडीएफसी बैंक का 'ऑफलाइनपे' ग्राहकों और व्यापारियों को मोबाइल नेटवर्क न होने पर भी भुगतान करने और प्राप्त करने में सक्षम करेगा।

एचडीएफसी बैंक पूरी तरह से ऑफलाइन मोड में डिजिटल भुगतान समाधान शुरू करने वाला उद्योग का पहला बैंक है। यह खराब नेटवर्क कनेक्टिविटी वाले छोटे शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल भुगतान को अपनाने को बढ़ावा दे सकता है। शहरी केंद्रों में भी, यह बड़े सार्वजनिक कार्यक्रमों, मेलों और प्रदर्शनियों के दौरान नेटवर्क भीड़ के बावजूद कैशलेस भुगतान को सक्षम कर सकता है; भूमिगत मेट्रो स्टेशन, पार्किंग स्थल, और नेटवर्क ब्लाइंड स्पॉट वाले खुदरा स्टोर; और यहां तक कि हवाई जहाज, समुद्री-नौकाओं और बिना नेटवर्क वाली ट्रेनों में भी।

पर्यावरण को पौरूष.....

(पृष्ठ तीन का शेष)

गौरिया :

बांस की चीप का बना मोरचंग की तरह का गोरिया नामक वाद्य दोनों होठों के बीच रखकर बजाया जाता है। इसके सिरे पर सूत की डोरी लगी होती है जिसे बार-बार झटका देने से ताल के साथ स्वरों का उतार-चढ़ाव बड़ा ही कर्णप्रिय लगता है। उदयपुर जिले के झाड़ोल, कोटड़ा, गोगुन्दा तथा सिरोही जिले की आबू रोड़ तहसील की जनजातियों में यह वाद्य विशेष प्रचलित है। भील एवं कथौड़ी जहां इसे गोराड़िया नाम से पुकारते हैं वहीं गरासियों में यह गोरिया नाम से जाना जाता है।

शंख :

शंख का महत्व कई रूपों में है। मुख्यत: मंदिरों में पूजा के समय शंख बजाने की परम्परा

तो है ही किंतु विवाहोत्सव, विजयोत्सव, राज्याभिषेक, हवन तथा किसी के आगमन पर मंगलसूचक शंख ध्वनि की जाती है। इसके नाद में प्रदूषण दूर करने की अद्‌भुत क्षमता है। इसकी ध्वनि से मानसिक तनाव, ब्लडप्रेशर, मधुमेह तथा नाक, कान एवं पाचन से जुड़े रोगों की संभावनाएं काफी कम हो जाती हैं। शंख में रखा पानी कभी खराब नहीं होता और कई रोगों को लाभ मिलता है। वायु शुद्धि के लिये भी यह पानी बड़ा उपयोगी है। इसके बजाने से फेफड़ों का अच्छा व्यायाम होकर दूषित हवा बाहर निकलती है। शरीर शक्तिशाली बनता है और कार्य करने की क्षमता बढ़ जाती है।

मुरला :

पूंगी की तरह का कद्‌दू की तुंबी वाला मुरला वाद्य कालबेलिया, जोगी, लंगा, मांगणियार तथा अन्य पेशेवर कलाकारों में प्रचलित है। वादन के समय लगाकर फूंकने की क्रिया नकसासी कहलाती है। कोटड़ा क्षेत्र में आदिवासियों के अलावा गरासिया, कालबेलिया तथा अन्य घुमक्कड़ जातियों में घुरालियों या घोड्‌यूं एक छोटा सा वाद्य है। इसे बांस का बाजा भी कहते हैं।

बांकिया :

बांकिया धातु निर्मित वाद्य है जो मांगलिक अवसरों पर बजाया जाता है। यह प्राय: पीतल की चद्‌दर का बना होता है। एक लंबी नलिका को बीच के एक चक्र में मोड़कर दो सिरे पूर्व-पश्चिम की तरह सीधे कर लिये जाते

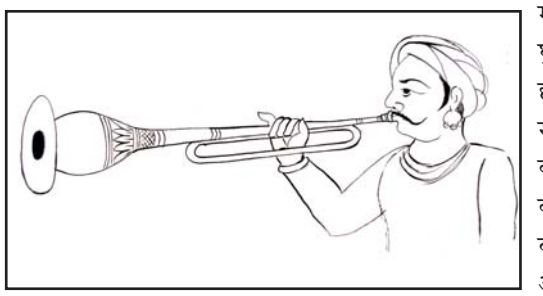

हैं। बीच का भाग मालाकार लंबा बिगुल जैसा लगता है। इसका पीछे का मुख तुरही की तरह संकरा तथा आगे का बड़े प्याले जैसा होता है। वक्र होने के कारण ही इसे बांका अथवा बांकिया कहा जाने लगा। इसे निरंतर बजाना संभव नहीं है। ठहर-ठहर कर फूंक मारी जाती है और तुड़ड़-तुड़ड़ जैसी आवाज निकलती है। बजाते समय स्वरों के उठाव से गले की आवाज खिंचाव तथा दबाव लिये होती है।

नागफणी :

नाग की आकृति का होने से नागफणी वाद्य कहलाया। पीतल की लंबी नलिका को सर्पाकार आकृति में मोड़ दिया जाता है। इसके सिर की शक्ल नाग-मुख की तरह खुली फण किये लगती है। पूंछ वाला भाग नलिका की तरह संकरा होता है। इसको होठों से सटाकर फूंक मारने से गंभीर ध्वनि निकलती है।

माटा :

मटकों के मुंह को चमड़े से मढ़कर माटों के रूप में बजाने वाले वादक पवाड़े गाने के लिए प्रसिद्ध हैं किंतु बिना चमड़ा मढ़े खाली मटकी को हाथों से घुमाते उसमें फूंक की हवा भरते हुए स्वर-संचरण करने की कला का कमाल हर कलाकार-वादक के बूते की नहीं है। आश्चर्य तब अधिक होता है, यह वाद्य उन कलाकारों का कमाल बना हुआ है जहां पीने के पानी तक के लाले पड़ते हैं। रेगिस्तानी भाग जैसलमेर-बाड़मेर के गायकों में इसका प्रचार वाकई दांतों तले अंगुली दबाने वाला है।

फूंक वाद्यों के संबंध में लोक में कई तरह की मिथकीय बातें, कथाएं तथा अवधारणाएं मिलती हैं। सभी में इनके महत्त्व, उपयोग तथा फल प्राप्ति के संकेत मिलते हैं। ये वाद्य मनुष्य के जीवन के आनंद-मंगल के वर्धक हैं।

अपनी शोधयात्राओं के दौरान मैंने वागड़, मारवाड़, मेवाड़, मेवात आदि अंचलों में ऐसे अनेक वादकों से भेंट कर उनसे जुड़े संस्कारों तथा उनकी यजमानी भागीदारी पर पर्याप्त जानकारी एकत्र की। समय-समय पर राजस्थान संगीत नाटक अकादमी, जवाहर कला केन्द्र तथा सांस्कृतिक केन्द्रों द्वारा आयोजित समारोहों तथा विशिष्ट मेलों में भी इन कलावादकों की प्रस्तुतियां देखीं।

अपने भारतीय लोकला मण्डल द्वारा उदयपुर में तो प्रतिवर्ष ही ऐसे लोकानुरंजन समारोहों में प्रांत तथा बाहर के कलादलों के साथ भी गायकों, वादकों तथा नर्तकों का सामेला किया।

नड़ वादक करणा भील को आमंत्रित करने पर तो पूरा उदयपुर ही उमड़ पड़ा। वह माना हुआ धाड़ेती था पर उतना ही पहुंचा हुआ नड़ वादक था। उसकी जलेबीदार बंट खाती मूंछें भी आकर्षण का केन्द्र बनीं। वह बड़ा अद्‌भुत कलाकार था। अपने माथे में भी राधा-कृष्ण का मन्दिर लिए चलता था।

प्रभाकर माचवे.....

(पृष्ठ आठ का शेष)

पढ़ना-लिखना अविश्रांत क्रम...)
कुछ कर गुजर हूं...
आशा दिल दिमाग पर हावी
भावी है मायावी

सस्नेह
प्रभाकर माचवे

जब पीछोला का प्रवेशांक 15 नवम्बर 1979 को बाल-विशेषांक के रूप में निकाला तो माचवेजी ने एक कविता भेजी। मुख पृष्ठ पर छपी वह कविता इस प्रकार थी-

बालादपि सुभाषितम् ग्राह्यम्

बड़े लोग बच्चे नहीं बन सकते
बच्चे एकदम बड़े नहीं बन सकते
इतना हम समझ लें
तो बहुत कुछ सीखने को है
एक वर्ग को दूसरे वर्ग से।
तितली अपनी जगह सुंदर है
हाथी अपनी जगह उपयोगी है
इसीलिए
भगवान भी बाल रूप में आए
बाल-कृष्ण, बाल-सुब्रह्यण्यम्
बाल गोपालों में रमे।
ईसा ने कहा-
बच्चों को मेरे पास आने दो
उनके लिए स्वर्ग का राज्य है।
कुमारी की पूजा हुई।
बच्चों के हाथों में देश का भविष्य है।
बच्चे ही सच्चे हैं।
उन्हें कहो मत कच्चे हैं।
बीज में ही बड़े वृक्ष छिपे पड़े हैं।
होनहार बिरवान के.....

अप्रैल 1989 में राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ने अपने वार्षिक समारोह में माचवेजी को आमंत्रित किया तब उनसे बड़ी आत्मीयतापूर्ण भेंट हुई। तब वे इदौर से प्रकाशित दैनिक 'चौथा संसार' के संपादक थे। उन्होंने मुझे राजस्थानी स्तंभ लिखने को कहा। फलस्वरूप जून से ही मैंने उसमें लिखना शुरू कर दिया। इस स्तंभ का उन्होंने 'भाषा भगिनी राजस्थानी' नाम दिया।

उदयपुर में मेरी और डॉ. विश्वंभर व्यास के साथ उनसे बड़ी लंबी देर तक साहित्यिक गप्पबाजी चलती रही। इसी बीच प्रसंग चल पड़ा यहां रह रहे मुनि कांतिसागरजी का। डॉ. माचवे ने कहा कि संध्या को उन्होंने मुझे अपने निवास भोजन पर बुलाया है। मैंने कहा कि भूपालपुरा में उनके निवास पर मेरा अक्सर जाना होता रहता है। उनके वहां एक नेमप्लेट भी लगी हुई है- डॉ. मुनि कांतिसागर नाम की।

यह सुन वे तपाक से बोले - ''अच्छा, वैसे वे पीएच.डी. तो हैं नहीं पर किसी ने लगादी होगी। मेरा उनका बड़ा पुराना और कई तरह के खट्‌टे-मीठे चस्कों का संपर्क है। देखना, जब मैं जाऊंगा तब वह नेमप्लेट वहां लटकी नहीं मिलेगी।'' सुबह जब मेरा उनसे मिलना हुआ तो सबसे पहले उन्होंने यही कहा- कल मैंने ठीक ही कहा था। मुनिजी के वहां उनकी नेमप्लेट मुझे देखने को नहीं मिली।

यहां से चलकर माचवेजी थोड़े अस्वस्थ होगये लेकिन वे आबू की एक संगोष्ठी में गए। उस संगोष्ठी में मेरे अग्रज डॉ. नरेन्द्र भानावत और भाभी डॉ. शांता भानावत भी सम्मिलित हुए। भाई साहब ने मुझे उनसे हुई जिंदादिली के बड़े रोचक किस्से सुनाए और वह पत्र भी दिखाया जो उन्होंने इंदौर से लिख भेजा। जून 21 सन् 1989 के उस काव्य पत्र में उन्होंने लिखा-

प्रिय नरेन्द्रजी,
नक्की लेक किनारे खाने गये दोसा
उन त्रिदोष बेलों में हो ही गया दोसा
अब मैं उसकी सुधि में हंसता हूं होकर मस्त
चिंता न करें, अब मैं हूं वैसा ही स्वस्थ
एक भेजता हूं कतरन वह शायद हो ठीक
बनी रहे यह मित्रता, यही हमारी सीख
श्रीमतीजी को आशीर्वाद

सप्रेम
प्रभाकर माचवे

पत्र पाकर भाई साहब ने राहत की सांस ली और मुझे कहा कि यह अच्छा सकुन है कि माचवेजी अब उत्तरोत्तर स्वस्थ-मस्त होते जा रहे हैं लेकिन यह किसे मालूम था कि उनके ऊपर दुर्देव की गहरी छाया घनी काली और गंभीर होती जा रही है जो उन्हें पूरे छह माह भी ठीक से नहीं जीने देगी और अन्तत: वह 16 दिसंबर 1989 को ही हम सबसे ओझल कर देगी।

अपनी रचनाधर्मिता में सदैव क्रियाशील रहने वाले माचवेजी अपने लेखन में बड़े प्रयोगवादी रहे और उतने ही सबके प्रियवादी भी। वे जितने सहृदय, सहज, सरल थे, अपनेपन में उतने ही अक्खड़-फक्खड़ थे इसलिए उन जैसा यदि कोई और होता, तो न जाने कितना आकाश उठा लेता, कितने तारे हथिया लेता, पर उन्होंने साहित्य का सितारा रहना ही पसंद किया। यह सितारा उन दसों दिशा का न होकर शत-राहों का है जहां होने का अर्थ ही प्रभाकर होना है। ऐसे साहित्य के प्रभाकर माचवे को मेरी श्रद्धा प्रणति।

शब्द रंजन--- ज्ञान रंजन और बहु रंजन भी

शब्द रंजन केवल शब्दों का रंजन ही नहीं, सरस्वती का अनुरंजन भी है। इसमें आपकी बड़भागी आहुति इस रूप में भी हो सकती है। अपने प्रतिष्ठान तथा प्रियजनों की स्मृति निमित्त विज्ञापन सहयोग करें।

मुख पृष्ठ	10,000/- रूपये
अंतिम पृष्ठ	7000/- रूपये
साधारण पृष्ठ	5000/- रूपये
आधा पृष्ठ	3000/- रूपये
चौथाई पृष्ठ	2000/- रूपये

सदस्यता शुल्क :

संरक्षक	11000/- रूपये
विशिष्ट सदस्य	5000/- रूपये
आजीवन सदस्य	3000/- रूपये
शब्द रंजन के सहयात्री	1500/- रूपये
साहित्यिक चौपाल	1000/- रूपये
वार्षिक संस्थागत	500/- रूपये
वार्षिक व्यक्तिगत	300/- रूपये

Shabd Ranjan, UCO BANK,
Bhupalpura Branch, Udaipur,
a/c no. 18450210000908,
IFSC no. UCBA0001845, a/c type- Current a/c

कृपया रचनाएं, समाचार एवं विज्ञापन आदि ई-मेल से भेजें।

shabdranjanudr@gmail.com

पत्रों के आलोक में (5)

डॉ. प्रभाकर माचवे, दिल्ली के पत्र

डॉ. प्रभाकर माचवे के नहीं रहने पर मेरी वही स्थिति हुई जो डॉ. श्याम परमार के नहीं रहने पर माचवेजी की हुई थी। अपने 31 दिसंबर 1977 के पोस्टकार्ड में डॉ. माचवे ने मुझे लिखा था- 'डॉ. श्याम परमार गुजर गए। बड़े दुख में हूं। उन पर लिखिए।'

समय व्यतीत होते कोई देर नहीं लगती। माचवेजी को जब याद करता हूं, सन् 1971 से लेकर लम्बा समय चित्रपट की भांति नयनोन्मुख हो उठता है। मैं उन्हें अपना हर प्रकाशन भेजता और तत्काल उनका पोस्टकार्ड पाता और फिर अपनी दिल्लगी सहित प्रतिक्रिया लिख भेजते। मैं उनका हर छपा हुआ लेखन पढ़ता और कभी-कभी उन्हें उसके संबंध में लिखता भी। जब मैंने अपनी कविता पुस्तक 'कोई-कोई औरत' मुद्रण के लिए प्रेस में देने की बात लिखी, तो तत्काल कलकत्ता से उन्होंने लिखा-

प्रिय भाई,

25.11.1972 के पत्र को पढ़कर खुशी हुई। मेरी प्रतिक्रिया-

'कोई-कोई औरत'
हजार पा जाती है
कोई-कोई क्वांरी ही रह जाती है
अपना-अपना भाग्य है!
औरत का क्या मूल्य?
उसके आगे देवता भी प्रार्थी हैं!!
(लक्ष्मीजी का जानते हो कौन साथी है?)

सस्नेह
प्रभाकर माचवे
30.11.1972

बाद में तो उन्होंने इस पुस्तक की भूमिका भी लिख भेजी। भेजते समय चिट्ठी में उन्होंने मुझे लिखा कि इसका 'जो चाहे शीर्षक लगा दें' सो मैंने इसी शीर्षक से वह भूमिका छपने भेज दी। दो पृष्ठ की इस भूमिका के अंत में उन्होंने जो लिखा उसी से उनकी मेरे प्रति दिल्लगी, स्नेहमय आत्मीयता और उनके निजी स्वभाव की उत्फुल्लता भी देखने को मिलती है।

उन्होंने लिखा - ''बड़ी अच्छी शुरूआत है। महेन्द्र ने लिखा कि मैं इन कविताओं की 'पगड़ी बंधाई' करूं। अजी साहब, यह जमाना अच्छों-अच्छों की पगड़ी उछालने का है। पगड़ी आजकल पहनता ही कौन है। नयी पीढ़ी तो नंगे सिर है और ज्यादह सिरफिरे नौजवान हुए तो सिर पर कफन बांधकर घूमते हैं। तो यह काम तो अपने बस का है नहीं। न खुद कभी पगड़ी बांधी, न बंधवाई, न बांधना आई दूसरे के सिर पर। सो 'पगड़ी बदल' भाई, इस मामले में, बनने से रहे।

दूसरी ओपमा उन्होंने दी कि उनके 'कवि-नाविक को काव्य-समंद में उतार दूं'। 'पीछोला' के पास रहनेवाले महेन्द्र भाई को समंदर की खूब सूझी। 'नावक के तीर' तो उनके पास हैं ही। हम इस मामले में भी अनाड़ी हैं। न नाव चलानी आती है न बहुत गहरे पानी- समुंदर आदि में तैरना। समुद्र दर्शन बहुत किया है। पानी के अनंत रूप देखे हैं। हिन्दी में तो 'ठहरा हुआ पानी' और 'पानी की पुकार' से लगाकर 'समुद्र गाथा' तक पच्चीसों पानीदार संग्रह हैं। अब 'आप' ही बतायें कि मुझ में वह पानी कहां जो इस सारी पनियल बाढ़ में कहीं ऊपर से बरसनेवाली 'दो बूंद' के लिए सबको लालायित कर दे। पर कवि शायद यही करता है। वह कहावत है- पत्थर को पिघला सकता है। ऐसी वाणी इस मरुस्थल के यात्री को मिले, यही आशीर्वाद दे सकता हूं। भानावत का 'भणिति' 'सुरसरि सम सब कहं हित होई' बने। यही शुभकामना।''

प्रभाकर माचवे
कलकत्ता, 9.9.1980

डॉ. माचवे 74 वर्ष के होने पर भी कभी पुराने नहीं हुए। वाणी, व्यवहार, व्याख्यान सभी दृष्टियों से वे बड़े तरोताजा और दिलदार ही बने रहे। उनका यशस्वी चित्त अपनी प्राचीनता को भी सदैव आधुनिक ही किए रहा। विषाद के क्षणों में भी वे ठहाके ही लगाते रहे। उनके ठहाके एक ठसकदार ठाठ लिए होते जो साहित्य और संस्कृति का हास देते हुए अपनी छोटी-सी बैठक को भी बड़ी महफिल में मजे से बांध लेते।

मुझे लिखे उनके कई खतों में केवल एक खत उनके चिंता-मन का है। यह पत्र दिल्ली से 07 दिसम्बर 1977 का लिखा हुआ है-

प्रिय मित्र,

पत्र मिला। मैं इस समय काफी चिंता में हूं। शिमला में आधा सामान पड़ा है। यहां दिल्ली में अपने मकान में बेटी-जमाई के पास आया हूं। पच्चीस-छब्बीस को हरिद्वार जाना है (षष्ठिपूर्ति) फिर बेटे के पास मुम्बई में। उसका पता बदल गया है सो नया लिखने को समय, मानसिक शांति नहीं।

सस्नेह
प्रभाकर माचवे

भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता में जब वे निदेशक थे, तब मुझे 1983 में भागीरथ कानोड़िया लोकसाहित्य व्याख्यानमाला के अंतर्गत राजस्थानी लोकगीतों पर व्याख्यान के लिए बुलाया और

चेकोस्लोवाकिया के हिन्दी के विद्वान चेलिशेव से मिलाया जिन्होंने बाद में इस व्याख्यानमाला की अध्यक्षता भी की। यहीं माचवेजी ने मुझे लोकसाहित्य की वे कुछ पुस्तकें भी दीं जो उनकी निजी भेंट में आई हुई थीं। कहा - 'मेरे से अधिक उपयोगी ये आपके लिए हैं।' राजस्थान और राजस्थानी के प्रति उनका विशेष आकर्षण और लगाव था। सन् 1971 में मेरे संपादन में प्रकाशित देवीलाल सामर अभिनंदन ग्रंथ 'गेहरो फूल गुलाब रो' के लिए उनसे लेख चाहा तो उन्होंने 'राजस्थान से प्रजास्थान तक' शीर्षक से बड़ा ही रंगदार लेख भेजा। यह लेख इस ग्रंथ का पहला लेख बना और बड़ा चर्चित रहा। इस लेख के प्रारंभ में उन्होंने आजादी से पूर्व राजस्थान के सामंती परिवेश का चित्रण किया। यथा -

''सफेद टोपियां इस्त्रीदार झकाझक, ऊंगलियों में अंगुठियां, गले में सोने की चैन, दाढ़ी मूंछ सफाचट, चमकदार चर्बीदार चेहरे, तुंदिल-तनु, शब्द-शूर, आश्वासन-प्रचूर, अक्रियावादी, मक्खीचूस, बर्मा या बंगाल में बनिज से खूब कमाकर 'देस' लौटने वाले अपरिवर्तित व्यापारी, बड़े नेताओं की ऊपर से नकल करनेवाले छुटभैया नेता-नैतिन, छोटे-छोटे अखबारों के अल्पजीवी सम्पादक, छोटे-छोटे आंदोलनों के कागजी घोड़े दौड़ानेवाले मुहर्रिर और मुदर्रिस..., बात-बात पर विदेशी 'कोटेशन' फैंकनेवाले लेक्चररी आलोचक..., बहुत कम साधना, बहुत अधिक डींगें हांकना..., मीराबाई के भजन सुब्बुलक्ष्मी के मुंह से..., राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्र में भी मानव स्वरूपधारी कठपुतलियां..., घणी खम्मा अन्दाता के नए-नए राष्ट्रभाषा खड़ी बोली या रंगरेज रूप..., सब तरह के नये रूपों में सामंती पैटर्न, वही पुन: फन उठाती हुई राजभक्ति, वही उसे बीन पर नचाते हुए पत्रकार-गारुड़ी, वही जहर, वही 'सांप ने छोड़ी ने कांचली'..., रोटियों की मांग पर लाठियां, नौकरियों की मांग पर आंसू गैस....।

ऐसे चित्र मन में उभरते हैं कि खिन्नता और खेद, ग्लानि और लज्जा बढ़ती है। हमारे ही लोग और ऐसा पिछड़ापन, ऐसा काला सोना, ऐसी दल बदल वाली राजनैतिक दलदल, ये साहित्यिक संकीर्णताएं और ऐसा सुरुचि का अभाव? आखिर क्यों और बक तक?'' लेकिन उसके बाद आजाद हुए राजस्थान का चित्रण करते हुए लिखा-

'' पुराने सामंती संस्कार 'नानारूपाय, नानावेशाय' फिर उभर कर आते रहते हैं। वे जीवनपोषी नहीं, जीवनशोषी तत्व हैं। लोकसाहित्य, लोककला, लोकभाषा की सुरक्षा के नाम पर कभी-कभी वे ही तत्व उभर आते हैं और ऐसी लड़ाइयां सुनने को मिलती हैं कि हाड़ौती में लोकसाहित्य श्रेष्ठ है या मारवाड़ी में, मेवाती में या जैसलमेरी में? कई बोलियां उपेक्षित पड़ी हैं। इन अहल्याओं को, शिलीभूत संवेदनाओं को कौनसे राम का पद-स्पर्श मिलेगा और कब? आजकल के राम तो पंचवटी पसंद नहीं करते और न वन की ओर प्रस्थान करना उन्हें भाता है। सात समुन्दर पार से इटावली और अंग्रेज भाषा शास्त्री और इतिहासकार दुर्धर मरुप्रदेश में आकर अनाल्स और व्याकरण लिखते-बनाते रहे अनाम अजानी भाषाओं के, और हम हैं कि हमारे पास इतना कुछ मूल्यवान है और वह भी बिखर रहा है, पर हम उसकी चिंता नहीं करते। हमें कौनसा सांप सूंघ गया है?''

15 नवम्बर 1979 को मैंने पाक्षिक 'पीछोला' का प्रकाशन शुरू किया। इसमें प्रकाशनार्थ मैंने 'मेरा जीवन : मेरी जबानी' स्तंभ के लिए माचवे साहब से पांच सौ शब्दों का आलेख मांगा। चार दिसंबर को मुझे उन्होंने यह आलेख भेजा भी, पर पीछोला के कुल पन्द्रह ही अंक दे पाया जिससे उनका आलेख कुंवारा ही रह गया। उनके नहीं रहने पर आज वही आलेख मेरे लिए अधिक महत्त्वपूर्ण बन गया है। इसमें उन्होंने लिखा -

जन्म दिवस :

26.12.1917

प्रेरक प्रसंग :

(1) महात्मा गांधी के दर्शन और सान्निध्य में सन् 1939 से 1942 तक सेवाग्राम में बिताए दिन।
(2) गांधीजी की सबसे बड़ी कृपा 8 नवंबर 1940 को उन्हीं की कुटी के पीछे, उन्हीं की प्रेरणा और मार्गदर्शन में, उन्हीं के आश्रम में पालिता कन्या कु. शरद पारनेकर के साथ मेरा विवाह।
(3) पं. जवाहरलाल नेहरू और डॉ. राधाकृष्णन् द्वारा इस विवाह की संस्तुति।
(4) सन् 1964 में लालबहादुर शास्त्री द्वारा मेरी केन्द्रीय संघ लोकसेवा आयोग, नई दिल्ली में विशेष अधिकारी के नाते नियुक्ति।
(5) साहित्यकारों में अनेक महान लेखकों की मुझ पर कृपा रही। उनमें प्रमुख हैं जो अब नहीं रहे- राहुल सांकृत्यायन, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', प्रेमंचद, माखनलाल चतुर्वेदी, गुप्तबंधु, मामा वरेरकर आदि।

कष्टकारी क्षण :

(1) दो छोटे बच्चों की मृत्यु 1943-47 के बीच।
(2) मां की मृत्यु 1953 में।
(3) आरंभिक आर्थिक कष्ट, जिसमें मैंने बी.ए., एम.ए. और पेंटिंग में डिप्लोमा की पढ़ाई की।
(4) साहित्य क्षेत्र में भी अनेक क्षुद्रों द्वारा विरोध।
(5) अरसिकेसु कवित्व निवेदनम् जैसे जीवन में अगणित प्रसंग आये।
(6) अनेक अकृतज्ञों से विश्वासघात हुआ।
(7) रूस में स्वर्गीय राहुलजी की पत्नी लोला और पुत्र होगर से मिला।
(8) जब किसी पढ़े-लिखे हिन्दी भाषी को, जो अपने को साहित्यप्रेमी और साहित्यज्ञाता मानता है, अपना परिचय देना पड़े।

उपलब्धियां :

(1) साहित्यरत्न में सर्वोत्तम अंक निबंध में, (1936) में।
(2) एम.ए. में प्रथम स्थान, दर्शन में (1937)में।
(3) सोवियत लैंड पुरस्कार- 'टाल्स्टाय और भारत' अनुवाद पर 1972 में।
(4) 30-40-50 उपन्यास और 'रूस में' पुस्तक पर उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान के दो छोटे पुरस्कार।
(5) अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज के न्यूयार्क अधिवेशन में 1960 में प्रेमंचद पर भाषण।
(6) जर्मनी में छपी दो किताबें - 'नयी कविता' और मराठी में 'कवि और कविता' में मेरी कविता का प्रकाशन।
(7) सोवियत एनसाइक्लोपीडिया में भारतीय साहित्य पर कई वर्षों तक लेखन।
(8) जापान के 'सर्वोदय' नामक पत्र में 'गांधी और भारतीय साहित्य' पर प्रकाशित मेरा लेख।
(9) बीस विश्वविद्यालयों में पीएच.डी. परीक्षक गाइड आदि।

भावी दिशाकल्प :

भावी
है मायावी
कौन जानता है?
किस क्षण सुरसा मौत निगल ले
झेलम, सतलज किधर रह गई रावी!
मैं नहीं नजूबी या कि ज्योतिषी
नहीं भविष्यत् की इन हाथों चाभी!
(चलता है बस नित्य परिश्रम

- शेष पृष्ठ सात पर

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।